A-PDF Image To PDF Demo. Purchase from www.A-PDF.com to remove the watermark

पाक ज़िंदगी का मदनी दौर

मदनी दौर में दावत व जिहाद के मरहले

मदनी दौर को तीन मरहलों में बांटा जा सकता है—

1. पहला मरहला

इस्लामी समाज की बुनियाद रखने का मरहला, जिसमें फ़िले पैदा किए गए, परेशानियां बढ़ाई गईं, अन्दर से रुकावटें खड़ी की गईं और बाहर से दुश्मनों ने मदीना को नेस्त व नाबूद करने के लिए चढ़ाइयां कीं।

यह मरहला मुसलमानों के ग़लबे और स्थिति पर क़ाबू पाने के साथ ही हुदैबिया समझौते पर (ज़ीकादा सन् 06 हि०) ख़त्म हो जाता है।

2. दूसरा मरहला

जिसमें बड़े दुश्मन से समझौता हुआ। यह मरहला मक्का विजय रमज़ान सन् 08 हि० पर ख़त्म होता है।

3. तीसरा मरहला

जिसमें अल्लाह के बन्दे अल्लाह के दीन में गिरोह-दर-गिरोह दाख़िल हुए। यही मरहला मदीने में क़ौमों और क़बीलों के प्रतिनिधिमंडलों के आने का मरहला है। यह मरहला अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक ज़िंदगी के आख़िर तक यानी रबीउल अव्वल सन् 11 हि० तक फैला हुआ है।

हिजरत के समय मदीना के हालात

हिजरत का मतलब सिर्फ़ यही नहीं था कि फ़िलों से और मज़ाक़ का निशाना बनने से निजात हासिल कर ली जाए, बल्कि इसमें यह मतलब भी शामिल था कि एक अमन वाले इलाक़े के अन्दर एक नए समाज के गठन में मदद की जाए। इसीलिए इसे हर समर्थ मुसलमान का कर्त्तव्य कहा गया था कि इस नए वतन के बनाने में हिस्सा ले और उसकी मज़बूती, हिफ़ाज़त, और उसको ऊंचा उठाने में अपनी कोशिश लगाए।

यह बात तो क़तई तौर पर मालूम है कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ही इस समाज के गठन के इमाम, कर्त्ता-धर्त्ता और रहनुमा थे और किसी विवाद के बिना ही सारे मामलों की बागडोर आप ही के हाथ में थी।

मदीना में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को तीन तरह की क़ौमों से वास्ता पड़ा, जिनमें से हर एक के हालात दूसरे से बिल्कुल अलग थे और हर एक क़ौम के ताल्लुक़ से कुछ ख़ास मसले थे, जो दूसरी क़ौमों के मसलों से अलग थे। ये तीनों क़ौमें नीचे लिखी जा रही हैं—

1. आपके पाकबाज़ सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम अजमईन की चुनी हुई और सब में नुमायां जमाअत,

2. मदीने के पुराने और असली क़बीलों से ताल्लुक़ रखने वाले मुश्रिक, जो अब तक ईमान नहीं लाए थे,

3. यहूदी।

1. सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम के ताल्लुक़ से आपको जिन समस्याओं का सामना था, उनकी व्याख्या यह है कि उनके लिए मदीने के हालात मक्का के हालात से क़तई तौर पर अलग थे। मक्के में उनका कलिमा एक था और उनका उद्देश्य भी एक था, मगर वे ख़ुद अलग-अलग घरानों में बिखरे हुए थे और मजबूर, परेशान और ज़लील व कमज़ोर थे। उनके हाथ में किसी तरह का कोई अधिकार न था। सारे अधिकार दीन के दुश्मनों के हाथ में थे और दुनिया का कोई भी इंसानी समाज जिन हिस्सों और ज़रूरी चीज़ों से क़ायम होता है, मक्का के मुसलमानों के पास वे हिस्से सिरे से थे ही नहीं कि उनकी बुनियाद पर किसी नए इस्लामी समाज का गठन किया जा सके।

इसलिए हम देखते हैं कि मक्की सूरतों में सिर्फ़ इस्लाम की आरंभिक बातों का विवरण दिया गया है और सिर्फ़ ऐसे आदेश दिए गए हैं जिन पर हर आदमी अकेले

अमल कर सकता है। इसके अलावा नेकी, भलाई और अच्छे अख़्लाक़ पर उभारा गया है और नीच और घटिया कामों से बचने की ताकीद की गई है।

इसके ख़िलाफ़ मदीने में मुसलमानों की बागडोर पहले ही दिन से ख़ुद उनके अपने हाथ में थी। उन पर किसी दूसरे का क़ब्ज़ा न था। इसलिए अब वक़्त आ गया था कि मुसलमान संस्कृति, समाज, अर्थ, राजनीति, शासन और सुलह और लड़ाई की समस्याओं का सामना करें और उनके लिए हलाल व हराम और इबादत व अख़्लाक वग़ैरह ज़िंदगी के मसलों को भरपूर तरीक़े से स्पष्ट किया जाए।

वक़्त आ गया था कि मुसलमान एक नया समाज यानी इस्लामी समाज बनाएं जो ज़िंदगी के तमाम मरहलों में जाहिली समाज से अलग और इंसानों में मौजूद किसी भी दूसरे समाज से नुमायां हो और उस इस्लामी दावत का नुमाइन्दा हो, जिसकी राह में मुसलमानों ने दस साल तक तरह-तरह की मशक़्क़तें और मुसीबतें सहन की थीं।

ज़ाहिर है कि इस तरह के किसी समाज का गठन एक दिन, एक महीना या एक साल में नहीं हो सकता, बल्कि इसके लिए एक लम्बी मुद्दत चाहिए होती है, ताकि उसमें धीरे-धीरे और एक-एक करके आदेश दिए जाएं और क़ानून बनाने का काम अभ्यास, ट्रेनिंग और व्यावहारिक तौर पर लागू करने के साथ-साथ पूरा किया जाए।

अब जहां तक आदेश और क़ानून देने और बनाने का मामला है, तो अल्लाह इसे ख़ुद पूरा करने वाला था और जहां तक इनके लागू करने और मुसलमानों की तर्बियत और रहनुमाई का मामला है, तो इस पर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लगे हुए थे। चुनांचे इर्शाद है—

'वही है जिसने उम्मियों (अपढ़ों) में ख़ुद उन्हीं के अन्दर से एक रसूल भेजा जो उन पर अल्लाह की आयतें तिलावत करता है और उन्हें पाक व साफ़ करता है और उन्हें किताब व हिक्मत सिखाता है और ये लोग यक़ीनन पहले खुली गुमराही में थे।'

(62 : 2)

इधर सहाबा किराम रज़ि० का यह हाल था कि वे आपकी ओर पूरी तरह कान लगाए रखते और जो आदेश आता, उससे अपने आपको जोड़कर ख़ुशी महसूस करते, जैसा कि इर्शाद है—

'जब उन पर अल्लाह की आयतें तिलावत की जाती हैं, तो उनके ईमान को बढ़ा देती हैं।'

(8 : 2)

चूंकि इन तमाम समस्याओं का विवरण देना हमारे सामने नहीं है, इसलिए हम इस पर ज़रूरत के मुताबिक़ बातें करेंगे।

बहरहाल यही सबसे बड़ी समस्या थी, जो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के सामने मुसलमानों के ताल्लुक़ से थी और बड़े पैमाने पर यही इस्लामी दावत और मुहम्मदी रिसालत का अभिप्राय भी था, लेकिन यह कोई हंगामी समस्या न थी, बल्कि हमेशा की और मुस्तक़िल समस्या थी, अलबत्ता इसके अलावा कुछ दूसरी समस्याएं भी थीं, जो फ़ौरी ध्यान चाहती थीं। संक्षेप में उनकी स्थिति स्पष्ट की जा रही है।

मुसलमानों की जमाअत में दो तरह के लोग थे—

एक वे जो ख़ुद अपनी ज़मीन, अपने मकान और अपने मालों के साथ रह रहे थे और इस बारे में उनको इससे ज़्यादा चिन्ता न थी, जितनी किसी आदमी को अपने घर वालों में अम्न व सुकून के साथ रहते हुए करनी पड़ती है। यह अंसार का गिरोह था और इनमें पीढ़ियों से आपस में बड़ी ज़ोरदार दुश्मनियां और नफ़रतें चली आ रही थीं।

इसके पहलू ब पहलू दूसरा गिरोह मुहाजिरों का था, जो उन सारी सुविधाओं से महरूम था और लुट-पिटकर किसी न किसी तरह अल्लाह भरोसे मदीने पहुंच गया था। इनके पास न तो रहने के लिए कोई ठिकाना था, न पेट पालने के लिए कोई काम और न सिरे से किसी क़िस्म का कोई माल, जिस पर उनकी अर्थव्यवस्था खड़ी हो सके।

फिर इन पनाह लेने वाले मुहाजिरों की तायदाद कोई मामूली भी न थी और उनमें हर दिन बढ़ौतरी ही हो रही थी, क्योंकि एलान कर दिया गया था कि जो कोई अल्लाह और उसके रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम पर ईमान रखता है, वह हिजरत करके मदीना आ जाए और मालूम है कि मदीने में न कोई बड़ी दौलत है, न आमदनी के साधन, चुनांचे मदीने का आर्थिक सन्तुलन बिगड़ गया, और इसी तंगी-तुर्शी में इस्लाम दुश्मन ताक़तों ने भी मदीना का लगभग आर्थिक बहिष्कार कर दिया, जिससे आयात बन्द हो गया और स्थिति बहुत ज़्यादा संगीन हो गई।

2. दूसरी क़ौम यानी मदीने के असल मुश्रिक निवासियों का हाल यह था कि उन्हें मुसलमानों पर कोई बालादस्ती (श्रेष्ठता) हासिल न थी। कुछ मुश्रिक शक व शुबहे में पड़े हुए थे और अपने बाप-दादा के दीन को छोड़ देने में संकोच कर रहे थे, लेकिन इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ अपने दिल में

कोई दुश्मनी और दांव-घात नहीं रख रहे थे। इस तरह के लोग थोड़े दिनों बाद ही मुसलमान हो गए और ख़ालिस और पक्के मुसलमान हो गए।

इसके ख़िलाफ़ कुछ ऐसे मुश्रिक थे जो अपने सीने में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ सख़्त कीना और दुश्मनी छिपाए हुए थे, लेकिन उन्हें मुक़ाबले में आने की जुर्रात न थी, बल्कि हालात को सामने रखते हुए आपसे मुहब्बत और ख़ुलूस ज़ाहिर करने पर मजबूर थे। इनमें सबसे आगे अब्दुल्लाह बिन उबई बिन सलूल था, यह वह व्यक्ति है, जिसे बुआस की लड़ाई के बाद अपना सरदार बनाने पर औस व ख़ज़रज ने सहमति दिखाई थी, हालांकि इससे पहले दोनों फ़रीक़ किसी के सरदार से सहमत नहीं हुए थे, लेकिन अब इसके लिए मूंगों का ताज तैयार किया जा रहा था, ताकि उसके सर पर शाही ताज रखकर उसकी बाक़ायदा बादशाही का एलान कर दिया जाए, यानी यह व्यक्ति मदीने का बादशाह होने ही वाला था कि अचानक अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का आना-जाना हो गया और लोगों का रुख उसके बजाए आपकी ओर हो गया।

उसे एहसास था कि आप ही ने उसकी बादशाही छीनी है, इसलिए वह अपने दिल में आपके ख़िलाफ़ कड़ी दुश्मनी छिपाए हुए था। इसके बावजूद जब उसने बद्र की लड़ाई के बाद देखा कि हालात उसके मुताबिक़ नहीं हैं और वह शिर्क पर क़ायम रहकर अब दुनिया के फ़ायदों से भी महरूम हुआ चाहता है, तो उसने ज़ाहिर में इस्लाम क़ुबूल करने का एलान कर दिया, लेकिन वह अब भी अन्दर से काफ़िर ही था। इसीलिए जब भी उसे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ किसी शरारत का मौक़ा मिलता, तो वह हरगिज़ न चूकता।

उसके साथी आमतौर से वे सरदार थे, जो उसकी बादशाही की छत्रछाया में बड़े-बड़े पदों की प्राप्ति की आशा लिए बैठे थे, पर अब उन्हें इससे महरूम हो जाना पड़ा था। ये लोग उस व्यक्ति के कामों में शरीक थे और उसकी योजनाओं के लागू करने में उसकी मदद करते थे और इस मक़्सद के लिए कभी-कभी नवजवानों और भोले-भाले मुसलमानों को भी तेज़ी से अपना साथी बना लेते थे।

(ग) तीसरी क़ौम यहूदी थी, जैसा कि गुज़र चुका है। ये लोग अशूरी और रूमी ज़ुल्म व जब्र से भाग कर हिजाज़ में शरण लिए हुए थे।

ये वास्तव में इब्रानी थे, लेकिन हिजाज़ में शरण लेने के बाद उनका खान-पान, भाषा, और सभ्यता आदि बिल्कुल अरबी रंग में रंग गई थी, यहां तक कि उनके क़बीलों और लोगों के नाम भी अरबी हो गए थे और यहां तक कि

इनमें और अरबों में शादी-ब्याह के रिश्ते भी क़ायम हो गए थे, लेकिन इन सबके बावजूद उनका नस्ली पक्षपात बहाल था और वे अरबों में मिले न थे, बल्कि अपनी इसराईली—यहूदी—राष्ट्रीयता पर गर्व करते थे और अरबों को बहुत ही तुच्छ समझते थे, यहां तक कि उन्हें उम्मी (अपढ़) समझते थे, जिसका मतलब उनके नज़दीक यह था, बुद्धू, जंगली, नीच, दलित और अछूत।

उनका विश्वास था कि अरबों का माल उनके लिए जायज़ है, जैसे चाहें खाएं, चुनांचे इर्शाद है—

'उन्होंने कहा, हम पर उम्मियों के मामले में कोई राह नहीं।' (3 : 75)

यानी उम्मियों का माल खाने में हमारी कोई पकड़ नहीं।

इन यहूदियों में अपने दीन के प्रचार के लिए कोई सरगर्मी नहीं पाई जाती थी। ले-देकर उनके पास दीन की जो पूंजी रह गई थी, वह थी फ़ालगिरी (शकुन-अपशकुन मालूम करना), जादू और झाड़-फूंक वग़ैरह। इन्हीं चीज़ों की वजह से वे अपने आपको इल्म और फ़ज़्ल का मालिक और रूहानी नेता और पेशवा समझते थे।

यहूदियों को धन कमाने की कला आती थी। अन्न, खजूर, शराब और कपड़े का कारोबार उन्हीं के हाथ में था। ये लोग अनाज, कपड़ा और शराब आयात करते थे और खजूर निर्यात करते थे। इसके अलावा भी उनके बहुत-से काम थे, जिनमें वे सरगर्म रहते थे। वे अपने कारोबारी माल में अरबों से दो गुना-तीन गुना लाभ लेते थे और इसी पर बस न करते थे, बल्कि वे ब्याज का काम भी करते थे। इसलिए वे अरब शेख़ों और सरदारों को सूदी क़र्ज़ के तौर पर बड़ी-बड़ी रक़में देते थे, जिन्हें ये सरदार नाम कमाने के लिए अपनी प्रशंसा करने वाले कवियों आदि पर बिल्कुल व्यर्थ और बे-दरेग़ ख़र्च कर देते थे।

इधर यहूदी इन रक़मों के बदले इन सरदारों से उनकी ज़मीनें, खेतियां और बाग़ वग़ैरह गिरवी रखवा लेते थे और कुछ साल बीतते-बीतते उनके मालिक बन बैठते थे।

ये लोग फूट डालने, षड्यंत्र रचने और लड़ाई-झगड़े की आग भड़काने में भी बड़े माहिर थे। ऐसी चालाकी से पड़ोसी क़बीलों में दुश्मनी के बीज बोते और एक को दूसरे के ख़िलाफ़ भड़काते थे कि उन क़बीलों को एहसास तक न होता। इसके बाद इन क़बीलों में आपस की लड़ाई होती रहती और अगर किसी तरह लड़ाई की यह आग ठंडी दिखाई देती, तो यहूदियों की छिपी चालें फिर हरकत में आ जातीं और लड़ाई फिर भड़क उठती।

कमाल यह था कि ये लोग क़बीलों को लड़ा-भिड़ाकर चुपचाप किनारे बैठे रहते और अरबों की तबाही का तमाशा देखते, अलबत्ता भारी-भरकम सूदी क़र्ज़ देते रहते, ताकि पूंजी की कमी की वजह से लड़ाई बन्द न होने पाए और इस तरह वे दोहरा नफ़ा कमाते रहते। एक ओर अपने यहूदी जत्थे को बचाए रखते और दूसरी ओर सूद का बाज़ार ठंडा न पड़ने देते, बल्कि सूद दर सूद के ज़रिए बड़ी-बड़ी दौलत कमाते।

यसरिब में इन यहूदियों के तीन मशहूर क़बीले थे—

1. **बनू क़ैनुक़ाअ**—ये ख़ज़रज के मित्र थे और इनकी आबादी मदीने के अन्दर ही थी।

2. **बनू नज़ीर**—

3. **बनू क़ुरैज़ा**—ये दोनों क़बीले औस के मित्र थे और इन दोनों की आबादी मदीने के बाहरी हिस्से में थी।

एक मुद्दत से यही क़बीले औस व ख़ज़रज के बीच लड़ाई के शोले भड़का रहे थे, और बुआस की लड़ाई में अपने-अपने मित्रों के साथ ख़ुद भी शरीक हुए थे।

स्वाभाविक बात है कि इन यहूदियों से इसके अलावा और कोई उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि ये इस्लाम को द्वेष और वैर-भाव से देखें, क्योंकि पैग़म्बर इनकी नस्ल के न थे कि उनके नस्ली पक्षपात को, जो उनके मनोविज्ञान और मनोवृत्ति का अटूट अंग बना हुआ था, शान्ति मिलती।

फिर इस्लाम की दावत एक भली दावत थी, जो टूटे दिलों को जोड़ती थी, द्वेष और वैर की आग को बुझाती थी। तमाम मामलों में अमानतदारी बरतने और पाक और हलाल माल खाने की पाबन्द बनाती थी।

इसका मतलब यह था कि अब यसरिब के क़बीले आपस में जुड़ जाएंगे, और ऐसी स्थिति में अनिवार्य रूप से वे यहूदियों की पकड़ से आज़ाद हो जाएंगे और उनकी कारोबारी चालें ढीली पड़ जाएंगी। वे उस सूदी दौलत से महरूम हो जाएंगे, जिस पर उनकी मालदारी की चक्की घूम रही थी, बल्कि यह भी डर था कि कहीं ये क़बीले जाग कर अपने हिसाब में उन सूदी मालों को भी न दाख़िल कर लें जिन्हें यहूदियों ने उनसे बे-मुआवज़ा हासिल किया था और इस तरह उन ज़मीनों और बाग़ों को वापस न ले लें जिन्हें सूद के नाम पर यहूदियों ने हाथिया लिया था।

जब से यहूदियों को मालूम हुआ था कि इस्लामी दावत यसरिब में अपनी जगह बनाना चाहती है, तभी से उन्होंने इन सारी बातों को अपने हिसाब में दाख़िल कर रखा था। इसीलिए यसरिब में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि

व सललम के आने के वक़्त ही से यहूदियों को इस्लाम और मुसलमानों से बड़ी दुश्मनी हो गई थी। अगरचे वे उसको प्रकट करने का साहस एक लम्बी मुद्दत बाद कर सके। इस स्थिति का बहुत साफ़-साफ़ पता इब्ने इस्हाक़ की बयान की हुई एक घटना से चलता है।

उनका बयान है कि मुझे उम्मुल मोमिनीन हज़रत सफ़िया बिन्त हुइ बिन अख़तब रज़ियल्लाहु अन्हा से यह रिवायत मिली है कि उन्होंने फ़रमाया, मैं अपने पिता और चचा अबू यासिर की निगाह में अपने बाप की सबसे चहेती औलाद थी। मैं चचा और बाप से जब कभी उनकी किसी भी औलाद के साथ मिलती, तो वे उसके बजाए मुझे ही उठाते।

जब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ लाए और क़बा में बनू अम्र बिन औफ़ के यहां उतरे, तो मेरे पिता हुइ बिन अख़तब और मेरे चचा अबू यासिर आपकी सेवा में सुबह तड़के हाज़िर हुए और सूरज डूबने के वक़्त वापस आए। बिल्कुल थके-मांदे, गिरते-पड़ते, लड़खड़ाती चाल चलते हुए। मैंने पहले की तरह चहक कर उनकी ओर दौड़ लगाई, लेकिन उन्हें इतना दुख था कि ख़ुदा की क़सम, दोनों में से किसी ने मेरी ओर तवज्जोह न दी और मैंने अपने चचा को सुना, वह मेरे पिता हुइ बिन अख़तब से कह रहे थे—

'क्या यह वही हैं?'

उन्होंने कहा, 'हां, ख़ुदा की क़सम!'

चचा ने कहा, 'आप उन्हें ठीक-ठीक पहचान रहे हैं?'

पिता ने कहा, हां।

चचा ने कहा, तो अब आपके मन में उनके बारे में क्या इरादे हैं?

पिता ने कहा :, 'दुश्मनी, ख़ुदा की क़सम, जब तक ज़िंदा रहूंगा।'[1]

इसी की गवाही सहीह बुख़ारी की इस रिवायत से भी मिलती है, जिसमें हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अन्हु के मुसलमान होने की घटना बयान की गई है। वह एक बहुत ही ऊंचे यहूदी विद्वान थे। आपको जब बनू नज्जार में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के आने की ख़बर मिली, तो वह आपकी सेवा में बिना देर किए हाज़िर हुए और कुछ सवाल किए, जिन्हें सिर्फ़ नबी ही जानता है और जब नबी की ओर से उनके जवाब सुने, तो वहीं उसी वक़्त मुसलमान हो गए, फिर आपसे कहा—

---

1. इब्ने हिशाम 1/518, 519

'यहूदी एक बोहतान लगाने वाली क़ौम है। अगर उन्हें इससे पहले कि आप कुछ मालूम करें, मेरे इस्लाम लाने का पता लग गया, तो वे आपके पास मुझ पर बोहतान गढ़ेंगे।'

इसलिए अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यहूदियों को बुला भेजा, वे आए (और उधर अब्दुल्लाह बिन सलाम घर के अन्दर छिप गए थे), तो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूछा कि अब्दुल्लाह बिन सलाम तुम्हारे अन्दर कैसे आदमी हैं?

उन्होंने कहा, हमारे सबसे बड़े विद्वान हैं और सबसे बड़े विद्वान के बेटे हैं। हमारे सबसे अच्छे आदमी हैं और सबसे अच्छे आदमी के बेटे हैं।

एक रिवायत के शब्द ये हैं कि हमारे सरदार हैं और हमारे सरदार के बेटे हैं और एक दूसरी रिवायत के शब्द ये हैं कि हमारे सब से अच्छे आदमी हैं और सबसे अच्छे आदमी के बेटे हैं और हम में सबसे अफ़ज़ल हैं और सबसे अफ़ज़ल आदमी के बेटे हैं।

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया, अच्छा यह बताओ, अगर अब्दुल्लाह मुसलमान हो जाएं तो?

यहूदियों ने दो या तीन बार कहा, अल्लाह उनको इससे बचाए रखे।

इसके बाद हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम निकले और फ़रमाया—

'अश्हदु अल-ला इला-ह इल्लल्लाह व अश्हदु अन-न मुहम्मदर रसूलुल्लाह'

(मैं गवाही देता हूं कि अल्लाह के सिवा कोई इबादत के लायक़ नहीं और मैं गवाही देता हूं कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं।)

इतना सुनना था कि यहूदी बोल पड़े—

'यह हमारा सबसे बुरा आदमी है और सबसे बुरे आदमी का बेटा है।' और (उसी वक़्त) उनकी बुराइयां शुरू कर दीं।

एक रिवायत में है कि इस पर हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया—

'ऐ यहूदियो! अल्लाह से डरो। उस अल्लाह की क़सम, जिसके सिवा कोई माबूद नहीं, तुम लोग जानते हो कि आप अल्लाह के रसूल हैं और आप हक़ लेकर तशरीफ़ लाए हैं।'

लेकिन यहूदियों ने कहा कि तुम झूठ कहते हो।[1]

---

1. सहीह बुख़ारी 1/459, 556, 561

यह पहला तर्जुबा था जो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को यहूदियों के बारे में हासिल हुआ और मदीने में दाख़िले के पहले ही दिन हासिल हुआ।

यहां तक जो कुछ लिखा गया है, यह मदीने के अन्दरूनी हालात से मुताल्लिक़ था। मदीने के बाहरी हिस्से में वे लोग थे जो क़ुरैश के धर्म का साथ देते थे और क़ुरैश मुसलमानों के सबसे बड़े दुश्मन थे। वे दस साल तक, जबकि मुसलमान उनके मातहत थे, आतंक फैलाने, धमकी देने और तंग करने के तमाम हथकंडे इस्तेमाल कर चुके थे। तरह-तरह की सख़्तियां और ज़ुल्म कर चुके थे। संगठित और विस्तृत प्रचार और बड़े ही आज़माइशी मनोवैज्ञानिक हथियारों को इस्तेमाल में ला चुके थे, फिर जब मुसलमानों ने मदीना हिजरत की, तो क़ुरैश ने उनकी ज़मीनें, मकान, और माल व दौलत सब कुछ ज़ब्त कर लिया और मुसलमानों और उनके घरवालों के दर्मियान रुकावट बनकर खड़े हो गए, बल्कि जिसको पा सके, क़ैद करके तरह-तरह की पीड़ाएं दीं, फिर इसी पर बस न किया, बल्कि प्यारे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को क़त्ल करने और आपकी दावत को जड़-बुनियाद से उखाड़ने के लिए भयानक साज़िशें कीं और उसे अमली जामा पहनाने के लिए अपनी सारी क्षमताएं लगा दीं।

इसके बाद भी जब मुसलमान किसी तरह बच-बचाकर कोई पांच सौ किलोमीटर दूर मदीना के भू-भाग पर जा पहुंचे, तो क़ुरैश ने अपनी साख का फ़ायदा उठाते हुए घिनौना सियासी किरदार अंजाम दिया, यानी ये चूंकि हरम के रहने वाले और बैतुल्लाह के पड़ोसी थे और उसकी वजह से उन्हें अरबों के दर्मियान दीनी क़ियादत और दुन्यवी स्टेट का पद मिला हुआ था, इसलिए उन्होंने अरब प्रायद्वीप के दूसरे मुश्रिकों को भड़का और वरग़ला कर मदीने का लगभग पूरा बाईकाट करा दिया, जिसकी वजह से मदीना में आनेवाली चीज़ें बहुत थोड़ी-सी रह गईं, जबकि वहां मुहाजिर शरणार्थियों की तायदाद हर दिन बढ़ती जा रही थी।

सच तो यह है कि मक्का के इन सरकशों और मुसलमानों के इस नए वतन के दर्मियान लड़ाई की हालत पैदा हो चुकी थी और यह बड़ी ही मूर्खता की बात है कि इस झगड़े का आरोप मुसलमानों के सर डाला जाए।

मुसलमानों को हक़ पहुंचता था कि जिस तरह उनके माल ज़ब्त किए गए थे, उसी तरह वे भी उन सरकशों के माल ज़ब्त करें, जिस तरह उन्हें सताया गया था, उसी तरह वे भी उन सरकशों को सताएं और जिस तरह मुसलमानों की

ज़िंदगियों के आगे रुकावटें खड़ी की गई थीं, उसी तरह मुसलमान भी इन सरकशों के आगे रुकावटें खड़ी करें और इन सरकशों को 'जैसे को तैसा' वाला बदला दें, ताकि उन्हें मुसलमानों को तबाह करने और जड़ से उखाड़ने का रास्ता न मिल सके।

ये थे वे विवाद और समस्याएं जिनसे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मदीना तशरीफ़ लाने के बाद, रसूल, रहबर, रहनुमा और इमाम की हैसियत से सामना करना था।

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इन तमाम समस्याओं के बारे में मदीना में पैग़म्बरों वाला किरदार और सरदारी की भूमिका निभाई और जो क़ौम रहमत, नर्मी या सख़्ती और कड़ाई की हक़दार थी, उसके साथ वही व्यवहार किया और इसमें कोई सन्देह नहीं कि रहमत और मुहब्बत का पहलू सख़्ती और कड़ाई पर छाया हुआ था, यहां तक कि कुछ ही वर्षों में पूरी बागडोर इस्लाम और मुसलमानों के हाथ में आ गई।

अगले पृष्ठों में इन्हीं बातों का विस्तृत विवेचन पाठकों के सामने लाया जाएगा।

पहला मरहला

नए समाज का गठन

हम बयान कर चुके हैं कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मदीने में बनू नज्जार के यहां जुमा के दिन 12 रबीउल अव्वल सन् 01 हि० मुताबिक़ 27 सितंबर सन् 622 ई० को हज़रत अबू अय्यूब अंसारी के मकान के सामने उतरे थे और उसी वक़्त फ़रमाया था कि इनशाअल्लाह (अगर अल्लाह ने चाहा) तो यहीं मंज़िल होगी। फिर आप हज़रत अबू अय्यूब अंसारी के घर मुंतक़िल हो गए थे।

मस्जिदे नबवी का निर्माण

इसके बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का पहला क़दम यह था कि आपने मस्जिद नबवी की तामीर शुरू की और इसके लिए वही जगह चुनी, जहां आपकी ऊंटनी बैठी थी। उस ज़मीन के मालिक दो यतीम बच्चे थे। आपने उनसे यह ज़मीन क़ीमत देकर ख़रीदी और मस्जिद बनाने में ख़ुद भी शरीक हो गए। आप ईंट और पत्थर ढोते थे और साथ ही फ़रमाते जाते थे—

अल्लाहुम-म ला ऐ-श इल्ला ऐशल आख़िरः
फ़ग़्फ़िर लिल अंसारि वल मुहाजिरः

(ऐ अल्लाह! ज़िंदगी तो बस आख़िरत की ज़िंदगी है, पस अंसार और मुहाजिरों को बख़्श दे।)

यह भी फ़रमाते—

हाज़ल हिमालु ला हिमा-ल ख़ैब-र
हाज़ा अबर्रु रब्बिना व अतहरु

(यह बोझ ख़ैबर का बोझ नहीं है। यह हमारे पालनहार की क़सम ज़्यादा नेक और पाकीज़ा है।)

आपके इस तरीक़े से सहाबा किराम रज़ि० के जोश व ख़रोश और सरगर्मी में बड़ी बढ़ोत्तरी हो जाती थी, चुनांचे सहाबा किराम कहते थे—

लइन क़-अदना वन्नबीयु यामलु
ल-ज़ा-क मिन्नल अमलुल मुज़ल्ललु

(अगर हम बैठे रहें और नबी सल्ल० काम करें, तो हमारा यह काम गुमराही का काम होगा।)

उस ज़मीन में मुश्रिकों की कुछ क़ब्रें थीं। कुछ वीराना भी था। खजूर और ग़रक़द के कुछ पेड़ भी थे। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुश्रिकों की क़ब्रें उखड़वा दीं, वीराना बराबर करा दिया और खजूरों और पेड़ों को काट कर क़िबले की ओर लगा दिया। (उस वक़्त क़िब्ला बैतुल मक़्दिस था) दरवाज़े के बाज़ू के दोनों पाए पत्थर के बनाए गए, दीवारें कच्ची ईंट और गारे से बनाई गईं। छत पर खजूर की शाखाएं और पत्ते डलवा दिए गए और खजूर के तनों के खम्भे बना दिए गए। ज़मीन पर रेत और छोटी-छोटी कंकरियां (छर्रियां) बिछा दी गईं। तीन दरवाज़े लगाए गए। क़िब्ले की दीवार से पिछली दीवार तक एक सौ हाथ लम्बाई थी, चौड़ाई भी उतनी या उससे कुछ कम थी। बुनियाद लगभग तीन हाथ गहरी थी।

आपने मस्जिद के बाज़ू में कुछ मकान भी बनाए, जिनकी दीवारें कच्ची ईंट की थीं, और छत खजूर की कड़ियां देकर खजूर की शाखा और पत्तों से बनाई गई थी। यही आपकी बीवियों के हुजरे (कोठरी) थे। इन हुजरों की तामीर पूरी हो जाने के बाद आप हज़रत अबू अय्यूब अंसारी रज़ि० के मकान से यहीं आ गए।[1]

मस्जिद सिर्फ़ नमाज़ अदा करने के लिए न थी, बल्कि यह एक युनिवर्सिटी थी, जिसमें मुसलमान इस्लामी शिक्षाओं और हिदायतों का सबक़ हासिल करते थे और एक महफ़िल थी, जिसमें मुद्दतों अज्ञानतापूर्ण संघर्षों और खिंचावों, नफ़रतों और आपसी लड़ाइयों से दो चार रहने वाले क़बीले के लोग अब मेल-मुहब्बत से मिल-जुलकर रह रहे थे, साथ ही यह एक सेंटर था, जहां से इस छोटी-सी स्टेट की सारी व्यवस्था चलाई जाती थी और विभिन्न प्रकार की मुहिमें भेजी जाती थीं। इसके अलावा इसकी हैसियत एक पार्लियामेंट की भी थी जिसमें मज्लिसे शूरा और प्रशासन की सभाएं हुआ करती थीं।

इन सबके साथ-साथ यह मस्जिद ही उन ग़रीब मुहाजिरों की एक अच्छी भली तायदाद का ठिकाना थी, जिनका वहां पर न कोई मकान था, न माल, न बीवी-बच्चे।

फिर हिजरत के शुरू के दिनों ही में अज़ान भी शुरू हुई। यह एक लाहूती नग़्मा (अलौकिक गीत) था जो हर दिन पांच बार फ़िज़ा में गूंजता था और जिससे पूरी दुनिया कांप उठती थी। इसमें हर दिन पांच बार एलान किया जाता था कि अल्लाह के अलावा कोई इबादत के लायक़ नहीं और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह के रसूल हैं, इस तरह अल्लाह की किबियाई (सर्वोच्च सत्ता)

---

1. सहीह बुख़ारी 1/71, 555, 560, ज़ादुल मआद, 2/96

को छोड़कर और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लाए हुए दीन को छोड़कर इस सृष्टि के भीतर हर किब्रियाई का निषेध होता था और इस दुनिया के अन्दर हर दीन का इंकार होता था। इस अज़ान को सपने के अन्दर देखने का शरफ़ एक बुज़ुर्ग सहाबी हज़रत अब्दुल्लाह बिन ज़ैद बिन अब्द रब्बिही को हासिल हुआ, जिसे नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बाक़ी रखा। और उन्हीं से मिलता हज़रत उमर बिन ख़त्ताब रज़ियल्लाहु अन्हु ने सपना देखा था। पूरी घटना सुन्नत व सीरत की तमाम किताबों में मिलती है।[1]

मुसलमानों को भाई-भाई बनाया गया

जिस तरह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मस्जिदे नबवी की तामीर का एहतिमाम फ़रमा कर आपसी जोड़ और मेल-मुहब्बत के एक सेंटर को वजूद बख़्शा, उसी तरह आपने इंसानी तारीख़ का एक और अति उज्ज्वल कारनामा अंजाम दिया, जिसे मुहाजिरों और अंसार के बीच मुवाख़ात (भाई-भाई बनाना) और भाईचारे का नाम दिया जाता है। इब्ने क़य्यिम लिखते हैं—

फिर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि० के मकान में मुहाजिरों और अंसार के बीच भाईचारा कराया था। कुल नव्वे आदमी थे, आधे मुहाजिर और आधे अंसार। भाईचारे की बुनियाद थी कि ये एक दूसरे के ग़म में शरीक होंगे और मौत के बाद नसबी रिश्तेदारों के बजाए यही एक दूसरे के वारिस होंगे। विरासत का यह हुक्म बद्र की लड़ाई तक चला, फिर यह आयत आई कि—

'नसबी रिश्तेदार एक दूसरे के ज़्यादा हक़दार हैं।' (6 : 331)

तो अंसार और मुहाजिरों में आपसी विरासत का हुक्म ख़त्म कर दिया गया, लेकिन भाईचारे का क़ौल व क़रार बाक़ी रहा।

कहा जाता है कि आपने एक और भाईचारा कराया था, जो ख़ुद आपस में मुहाजिरों के बीच था, लेकिन पहली बात ही साबित है। यों ही मुहाजिर अपने आपसी इस्लामी भाईचारा, वतनी भाईचारा और रिश्ते और नातेदारी के भाईचारे की बुनियाद पर आपस में अब किसी भाईचारे के मुहताज न थे, जबकि मुहाजिर और अंसार का मामला इससे अलग था।[2]

---

1. तिर्मिज़ी, अस्सलातु बद-उल अज़ान, हदीस न० 189 (1/358, 359) अबू दाऊद, मुस्नद अहमद वग़ैरह।
2. ज़ादुल मआद 2/56

इस भाईचारे का मक़्सूद यह था कि अज्ञानतापूर्ण पक्षपात ख़त्म हो, स्वाभिमान जो कुछ हो, इस्लाम के लिए हो। नस्ल, रंग और वतन के भेदभाव समाप्त हो जाएं। दोस्ती और दुश्मनी की बुनियाद इंसानियत और तक़्वा के अलावा कुछ और न हो।

इस भाईचारे के साथ त्याग-भाव, सेवा-भाव, और प्रेम-भाव मिले-जुले पाए जा रहे थे और इसीलिए उसने इस नए समाज को बड़े अनोखे और बे-मिसाल कारनामों से भर दिया था।

चुनांचे सहीह बुख़ारी में रिवायत आती है कि मुहाजिर जब मदीना तशरीफ़ लाए, तो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अब्दुर्रहमान बिन औफ़ रज़ियल्लाहु अन्हु और साद बिन रबीअ रज़ियल्लाहु अन्हु के बीच भाईचारा करा दिया। इसके बाद हज़रत साद रज़ि० ने हज़रत अब्दुर्रहमान रज़ि० से कहा—

'अंसार में मैं सबसे ज़्यादा मालदार हूं। आप मेरा माल दो हिस्सों में बांटकर (आधा ले लें) और मेरी दो बीवियां हैं। आप देख लें, जो ज़्यादा पसन्द हो, मुझे बता दें। मैं उसे तलाक़ दे दूं और इद्दत गुज़रने के बाद आप उससे शादी कर लें।'

हज़रत अब्दुर्रहमान ने कहा, 'अल्लाह आपके बीवी-बच्चों और माल में बरकत दे, आप लोगों का बाज़ार कहां है?'

लोगों ने उन्हें बनू क़ैनुक़ाअ का बाज़ार बतला दिया। वह वापस आए तो उनके पास कुछ फ़ायदे का पनीर और घी था। इसके बाद वह रोज़ाना जाते रहे। फिर एक दिन आए, तो उन पर पीलेपन का असर था।

नबी सल्ल० ने मालूम किया, यह क्या है?

उन्होंने कहा, मैंने शादी की है।

आपने फ़रमाया, औरत को मह्र कितना दिया है?

बोले, एक नवात (गुठली) सोना।[1] कहा जाता है कि उसकी क़ीमत उन दिनों पांच दिरहम थी और कहा जाता है कि चौथाई दीनार।

इसी तरह हज़रत अबू हुरैरह रज़ि० से एक रिवायत आई है कि अंसार ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से अर्ज़ किया, 'आप हमारे बीच और हमारे भाइयों के बीच हमारे खजूर के बाग़ बांट दें।'

आपने फ़रमाया, नहीं।

अंसार ने कहा, तब आप लोग यानी मुहाजिर हमारा काम कर दिया करें और

---

1. सहीह बुख़ारी, बाब 'ईख़ाउन्नबी बैनलमुहाजिरीन वल अंसार' 1/553

हम फल में आप लोगों को शरीक रखेंगे।

उन्होंने कहा, ठीक है, हमने बात सुनी और मानी।[1]

इससे अन्दाज़ा किया जा सकता है कि अंसार ने किस तरह बढ़-चढ़कर अपने मुहाजिर भाइयों का सत्कार किया था और कितनी मुहब्बत, निष्ठा और त्याग से काम लिया था और मुहाजिर उनकी इन कृपाओं का कितना आदर करते थे। चुनांचे उन्होंने इसका कोई ग़लत फ़ायदा नहीं उठाया, बल्कि उनसे सिर्फ़ उतना ही हासिल किया जिससे वे अपनी टूटी हुई अर्थव्यवस्था की कमर सीधी कर सकते थे।

और सच तो यह है कि यह भाईचारा अपूर्व सूझ-बूझ, विवेकपूर्ण राजनीति और मुसलमानों की ढेर सारी समस्याओं का एक बेहतरीन हल था।

इस्लामी सहयोग का क़रार

उल्लिखित भाईचारे की तरह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक और वायदा-क़रार कराया, जिसके ज़रिए सारे अज्ञानतापूर्ण झगड़ों, क़बीलेवार संघर्षों की बुनियाद ढा दी और अज्ञानतापूर्ण युग के रस्म व रिवाज के लिए कोई गुंजाइश न छोड़ी। नीचे इस क़ौल व क़रार को उसकी धाराओं सहित थोड़े में पेश किया जा रहा है।

यह लेख है मुहम्मद नबी सल्ल० की ओर से कुरैशी, यसरिबी और उनके आधीन होकर उनके साथ जुड़े रहने और जिहाद करने वाले मोमिनों और मुसलमानों के बीच कि—

1. ये सब अपने मासिवा इंसानों से अलग एक उम्मत (समुदाय) हैं।

2. मुहाजिर क़ुरैश अपनी पिछली हालत के मुताबिक़ आपस में दियत अदा करेंगे और ईमान वालों के दर्मियान भले तरीक़े से और इंसाफ़ की बुनियादों पर अपने क़ैदी का फ़िदया अदा करेंगे और उनका हर गिरोह भले तरीक़े पर और ईमान वालों के दर्मियान इंसाफ़ के साथ अपने क़ैदी का फ़िदया अदा करेगा।

3. ईमान वाले अपने बीच किसी बेकस को फ़िदया या दियत के मामले में भले तरीक़े के मुताबिक़ लेन-देन से महरूम न रखेंगे।

---

1. सहीह बुख़ारी, बाब इज़ा क़ा-ल इक्फ़िनी मऊनतल नख़्ल 1/312, फ़तुल बारी 4/337, हदीस न० 2049, साथ ही 2293, 3781, 3937, 5078, 5148, 5153, 5155, 5167, 6068, 6386, भाईचारे की घटना के लिए देखिए सहीह मुस्लिम हदीस न० 2529, सुनन अबी दाऊद हदीस न० 2529, अल-अदबुल मुफ़रद, हदीस न० 6083, मुस्नद अबी याला 4/366 वग़ैरह

4. सारे सच्चे ईमान वाले उस व्यक्ति के ख़िलाफ़ होंगे जो उन पर ज़्यादती करेगा, या ईमान वालों के दर्मियान ज़ुल्म और गुनाह और ज़्यादती और फ़साद के रास्ते को खोज रहा होगा।

5. इन सबके हाथ उस व्यक्ति के ख़िलाफ़ होंगे, चाहे वह उनमें से किसी का लड़का ही क्यों न हो।

6. कोई ईमान वाला किसी ईमान वाले को काफ़िर के बदले क़त्ल न करेगा।

7. किसी ईमान वाले के ख़िलाफ़ किसी काफ़िर की मदद न करेगा।

8. अल्लाह का ज़िम्मा (वचन) एक होगा और एक मामूली आदमी का दिया हुआ ज़िम्मा भी सारे मुसलमानों पर लागू होगा।

9. जो यहूदी हमारी पैरवी करने लगें, उनकी मदद की जाएगी और वे दूसरे मुसलमानों जैसे होंगे। न उन पर ज़ुल्म किया जाएगा और न उनके ख़िलाफ़ सहयोग किया जाएगा।

10. मुसलमानों का समझौता एक होगा। कोई मुसलमान किसी मुसलमान को छोड़कर अल्लाह के रास्ते में हो रहे युद्ध के सिलसिले में सुलह नहीं करेगा, बल्कि सबके सब बराबरी और न्याय के आधार पर कोई क़ौल व क़रार करेंगे।

11. मुसलमान उस ख़ून में एक दूसरे के बराबर होंगे, जिसे कोई अल्लाह के रास्ते में बहाएगा।

12. कोई मुश्रिक क़ुरैश की किसी जान या माल को पनाह नहीं दे सकता और न किसी मोमिन के आगे उसकी हिफ़ाज़त के लिए रुकावट बन सकता है।

13. जो आदमी किसी ईमान वाले को क़त्ल करेगा और सबूत मौजूद होगा, उससे क़सास (बदला) लिया जाएगा, सिवाए इस शक्ल के कि मक़्तूल का वली राज़ी हो जाए।

14. यह कि सारे ईमान वाले उसके ख़िलाफ़ होंगे। इनके लिए इसके सिवा कुछ हलाल न होगा कि उसके ख़िलाफ़ उठ खड़े हों।

15. किसी ईमान वाले के लिए हलाल न होगा कि किसी हंगामा बरपा करने वाले (या बिद्अती) की मदद करे और उसे पनाह दे और जो उसकी मदद करेगा या उसे पनाह देगा, उस पर क़ियामत के दिन अल्लाह की लानत और उसका ग़ज़ब होगा और उसका फ़र्ज़ और नफ़्ल कुछ भी क़ुबूल न किया जाएगा।

16. तुम्हारे बीच जो भी मतभेद पैदा होगा, उसे अल्लाह और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ओर पलटाया जाएगा।[1]

---

1. इब्ने हिशाम 1/502-503

समाज का नया रूप

इस सूझ-बूझ, हिक्मत और इस दूरदर्शिता से अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक नए समाज की बुनियादें मज़बूत कीं, लेकिन सच तो यह है कि समाज का प्रत्यक्ष रूप उन अप्रत्यक्ष शिक्षाओं के प्रभाव में था, जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की संगति से सहाबा किराम की ज़िंदगियों में देखा जा सकता था।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम उन्हें संवारने-सजाने, उनकी शिक्षा-दीक्षा और उन्हें आदर्श चरित्र के अनुसार ढालने की बराबर कोशिशें करते रहते थे और उन्हें मुहब्बत, भाईचारा, इबादत व इताअत के आदाब बराबर सिखाते और बताते रहते थे।

एक सहाबी ने आपसे पूछा कि कौन-सा इस्लाम बेहतर है? (यानी इस्लाम में कौन-सा अमल बेहतर है?)

आपने फ़रमाया, तुम खाना खिलाओ और पहचान वाले और बे-पहचान वाले सबको सलाम करो।[1]

हज़रत अब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ियल्लाहु अन्हु का बयान है कि जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मदीना तशरीफ़ लाए, तो मैं आपकी सेवा में हाज़िर हुआ। जब मैंने आपका मुबारक चेहरा देखा, तो अच्छी तरह समझ गया कि वह किसी झूठे आदमी का चेहरा नहीं हो सकता।

फिर आपने पहली बात जो इर्शाद फ़रमाई, वह यह थी, ऐ लोगो! सलाम फैलाओ, खाना खिलाओ, रिश्तों-नातों को जोड़ो और रात में जब लोग सो रहे हों, नमाज़ पढ़ो। जन्नत में सलामती के साथ दाख़िल हो जाओगे।[2]

आप फ़रमाते थे, वह व्यक्ति जन्नत में दाख़िल न होगा, जिसका पड़ोसी, उसकी शरारतों और तबाहकारियों से बचा न रहे।[3]

और फ़रमाते थे, मुसलमान वह है जिसकी ज़ुबान और हाथ से मुसलमान बचे रहें[4].

और फ़रमाते थे, 'तुम में से कोई व्यक्ति ईमान वाला नहीं हो सकता, यहां तक

---

1. सहीह बुख़ारी 1/6, 9
2. तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, दारमी, मिश्कात 1/168
3. सहीह मुस्लिम, मिश्कात, 2/422
4. सहीह बुख़ारी 1/6

कि अपने भाई के लिए वही चीज़ पसन्द करे जो ख़ुद अपने लिए पसन्द करता है।[1]

और फ़रमाते थे, सारे ईमान वाले एक आदमी की तरह हैं कि अगर उसकी आंख में तक्लीफ़ हो तो सारे जिस्म को तक्लीफ़ महसूस होती है और अगर सर में तक्लीफ़ हो तो सारे जिस्म को तक्लीफ़ महसूस होती है।[2]

और फ़रमाते, मोमिन (ईमान वाला) मोमिन के लिए इमारत की तरह है, जिसका कुछ कुछ को ताक़त पहुंचाता है।[3]

और फ़रमाते, आपस में बुग़्ज़ न रखो, आपस में एक दूसरे से जलो नहीं, एक दूसरे से पीठ न फेरो और अल्लाह के बन्दे और भाई-भाई बनकर रहो। किसी मुसलमान के लिए हलाल नहीं है कि अपने भाई को तीन दिन से ऊपर छोड़े रहे।[4]

और फ़रमाते, मुसलमान मुसलमान का भाई है, न उस पर ज़ुल्म करे और न उसे दुश्मन के हवाले करे और जो व्यक्ति अपने भाई की ज़रूरत पूरी करने में लगा रहेगा, अल्लाह उसकी ज़रूरतें पूरी करेगा और जो व्यक्ति किसी मुसलमान से कोई ग़म और दुख दूर करेगा, अल्लाह उस व्यक्ति से क़ियामत के दिन के दुखों में से कोई दुख दूर करेगा और जो व्यक्ति किसी मुसलमान की परदापोशी करेगा, अल्लाह क़ियामत के दिन उसकी परदापोशी करेगा।[5]

और फ़रमाते, तुम लोग ज़मीन वालों पर मेहरबानी करो, तुम पर आसमान वाला मेहरबानी करेगा।[6]

और फ़रमाते, वह व्यक्ति मोमिन नहीं, जो ख़ुद पेट भरकर खा ले और उसके बग़ल में रहने वाला पड़ोसी भूखा रहे।[7]

और फ़रमाते, मुसलमान से गाली-गलोच करना फ़िस्क़ है और उससे मार-काट करना कुफ़्र है।[8]

इसी तरह आप रास्ते से तक्लीफ़ पहुंचाने वाली चीज़ हटाने को सदक़ा क़रार

---

1. सहीह बुख़ारी 1/6
2. मुस्लिम, मिश्कात 2/422
3. मुस्लिम, मिश्कात 2/422, सहीह बुख़ारी 2/890
4. सहीह बुख़ारी 2/896
5. बुख़ारी-मुस्लिम, मिश्कात 2/422
6. सुनने अबू दाऊद 2/335, जामेअ तिर्मिज़ी 2/14
7. शोबुल ईमान (बैहक़ी) मिश्कात 2/424
8. सहीह बुख़ारी 2/893,

देते थे, और इसे ईमान की शाखाओं में से एक शाखा गिना करते थे।[1]

साथ ही आप सदक़े और ख़ैरात पर उभारते थे, उसकी ऐसी-ऐसी बड़ाइयां बयान करते थे कि उसकी ओर दिल अपने आप खिंचते चले जाएं, चुनांचे आप फ़रमाते कि सदक़ा गुनाहों को ऐसे ही बुझा देता है, जैसे पानी आग को बुझाता है।[2]

और आप फ़रमाते कि जो मुसलमान किसी नंगे मुसलमान को कपड़ा पहना दे, अल्लाह उसे जन्नत का हरा कपड़ा पहनाएगा और जो मुसलमान किसी भूखे मुसलमान को खाना खिला दे, अल्लाह उसे जन्नत के फल खिलाएगा और जो मुसलमान किसी प्यासे मुसलमान को पानी पिला दे, अल्लाह उसे जन्नत की मुहर लगी हुई शराबे तहूर पिलाएगा।[3]

आप फ़रमाते, आग से बचो, अगरचे खजूर का एक टुकड़ा ही सदक़ा करके और अगर वह भी न पाओ तो पाकीज़ा बोल ही के ज़रिए।[4]

और इसी के पहलू-ब-पहलू दूसरी ओर आप मांगने से परहेज़ की भी बहुत ज़्यादा ताकीद फ़रमाते, सब्र व क़नाअत की फ़ज़ीलतें सुनाते और सवाल करने को सवाल करने वाले के चेहरे के लिए नोच, खरोंच और घाव क़रार देते।[5] अलबत्ता उससे उस व्यक्ति को अपवाद क़रार दिया जो बहुत ज़्यादा मजबूर होकर सवाल करे।

इसी तरह आप यह भी बयान फ़रमाते कि किन इबादतों की क्या फ़ज़ीलतें हैं और अल्लाह के नज़दीक उनका क्या अज्र व सवाब है? फिर आप पर आसमान से जो वह्य आती, आप उससे मुसलमानों को बड़ी मज़बूती से जोड़े रखते। आप वह वह्य मुसलमानों को पढ़कर सुनाते और मुसलमान आपको पढ़कर सुनाते, ताकि इस अमल से उनके अन्दर सूझ-बूझ के अलावा दावत का हक़ और पैग़म्बराना ज़िम्मेदारियों का शऊर भी पैदा हो।

इस तरह अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुसलमानों के अन्दर को झिंझोड़ा, उनकी ख़ुदा की बख़्शी सलाहियतों को तरक़्क़ी दी और उन्हें उच्चतम मूल्यों का और चरित्र का मालिक बनाया, यहां तक कि वे नबियों की

---

1. इस विषय की हदीसें बुख़ारी-मुस्लिम में रिवायत की गई हैं, मिश्कात 1/12, 167
2. अहमद, तिर्मिज़ी, इब्ने माजा, मिश्कात, 1/14
3. सुनने अबू दाऊद, जामेअ तिर्मिज़ी, मिश्कात 1/169
4. सहीह बुख़ारी 1/190, 2/890
5. देखिए अबू दाऊद, तिर्मिज़ी, नसई, इब्ने माजा, दारमी, मिश्कात 1/163

तारीख़ में नबियों के बाद फ़ज़्ल व कमाल की सबसे ऊंची चोटी का नमूना बन गए।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन मस्ऊद रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि जिस व्यक्ति को तरीक़ा अख़्तियार करना हो, वह गुज़रे हुए लोगों का तरीक़ा अख़्तियार करे, क्योंकि ज़िंदा के बारे में फ़िले का अंदेशा है। वे लोग नबी के साथी थे, इस उम्मत में सबसे अफ़ज़ल, सबसे नेकदिल, सबसे गहरे इल्म के मालिक और सबसे ज़्यादा बे-तकल्लुफ़। अल्लाह ने उन्हें अपने नबी का साथी बनने और अपने दीन के क़ायम करने के लिए चुना, इसलिए उनका फ़ज़्ल पहचानो और उनके पदचिह्नों पर चलो और जितना मुम्किन हो उनके चरित्र और आचरण से चिमटे रहो, क्योंकि वे लोग हिदायत के सीधे रास्ते पर थे?[1]

फिर हमारे पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ख़ुद भी ऐसे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष गुणों, कमालों, अल्लाह की दी हुई क्षमताओं, बड़ाइयों और चरित्र और आचरण के आदर्श को पहुंचे हुए थे कि दिल अपने आप आपकी ओर खिंचे जाते थे और जानें क़ुर्बान हुआ चाहती थीं, चुनांचे आपकी ज़ुबान से ज्योंही कोई शब्द निकलता, सहाबा किराम उसे पूरा करने के लिए दौड़ पड़ते और हिदायत व रहनुमाई की जो बात आप इर्शाद फ़रमाते, उसे दिल में बिठाने के लिए, गोया एक दूसरे से आगे निकलने की बाज़ी लग जाती।

इस तरह की कोशिशों से नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ऐसे समाज के गठन में कामियाब हो गए, जो इतिहास का सबसे ज़्यादा कमाल वाला और शरफ़ से भरा-पुरा समाज था और उस समाज की समस्याओं का ऐसा सुन्दर हल निकाला कि मानवता ने एक लम्बे समय तक ज़माने की चक्की में पिसने और अथाह अंधियारियों में हाथ-पांव मारकर थक जाने के बाद पहली बार चैन की सांस ली।

इस नए समाज के तत्व ऐसी उच्च और श्रेष्ठ शिक्षाओं द्वारा निखरे-संवरे और पूरे हुए, जिसने पूरी हिम्मत और बहादुरी के साथ ज़माने के हर झटके का मुक़ाबला करके उसका रुख़ फेर दिया और इतिहास की धारा बदल दी।

---

1. रज़ीन, मिश्कात 1/32

यहूदियों के साथ समझौता

नबी सल्ल० ने हिजरत के बाद जब मुसलमानों के बीच अक़ीदे, सियासत और व्यवस्था की इकाई के ज़रिए एक नए इस्लामी समाज की बुनियादें मज़बूत कर लीं, तो ग़ैर-मुस्लिमों के साथ अपने ताल्लुक़ात ठीक करने की ओर तवज्जोह फ़रमाई।

आपका मक़्सूद यह था कि सारी इंसानियत को अम्न व सलामती, सुख-शान्ति मिले और इसके साथ ही मदीना और उसके पास-पड़ोस का इलाक़ा एक संघीय इकाई में संगठित हो जाए। चुनांचे आपने उदारता और विशालहृदयता के एक नियम बनाए, जिनको इस तास्सुब और अतिवाद से भरी दुनिया में कोई सोच भी नहीं सकता था।

जैसा कि हम बता चुके हैं, मदीने के सबसे क़रीबी पड़ोसी यहूदी थे। ये लोग अगरचे पीठ पीछे मुसलमानों से दुश्मनी रखते थे, लेकिन उन्होंने अब तक किसी मोर्चाबन्दी और झगड़े को ज़ाहिर नहीं किया था, इसलिए अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनके साथ एक समझौता किया, जिसमें उन्हें दीन व मज़हब और जान व माल की बिल्कुल आज़ादी दी गई थी और देश निकाला, जायदाद की ज़ब्ती या झगड़े की सियासत की कोई दिशा तै नहीं की गई थी।

यह समझौता इसी समझौते की रोशनी में हुआ था, जो ख़ुद मुसलमानों के बीच आपस में तै पाया था, और जिसका उल्लेख पहले ही किया जा चुका है। आगे इस समझौते की अहम धाराएं पेश की जा रही है।

समझौते की धाराएं

1. बनू औफ़ के यहूदी मुसलमानों के साथ मिलकर एक ही उम्मत होंगे। यहूदी अपने दीन पर अमल करेंगे और मुसलमान अपने दीन पर। ख़ुद उनका भी यही हक़ होगा, और उनके ग़ुलामों और मुताल्लिक़ लोगों का भी और बनू औफ़ के अलावा दूसरे यहूदियों के भी यही हक़ होंगे।

2. यहूदी अपने ख़र्चे के ज़िम्मेदार होंगे और मुसलमान अपने ख़र्चों के।

3. और जो ताक़त इस समझौते के किसी फ़रीक़ से लड़ाई करेगी, सब उसके ख़िलाफ़ आपस में सहायता करेंगे।

4. और इस समझौते में शरीक गिरोहों के आपसी ताल्लुक़ एक दूसरे का हित चाहने, भलाई करने और फ़ायदा पहुंचाने की बुनियाद पर होंगे, गुनाह पर नहीं।

5. कोई आदमी अपने मित्र की वजह से अपराधी न ठहराया जाएगा।

6. मज़्लूम की मदद की जाएगी।

7. जब तक लड़ाई चलती रहेगी, यहूदी भी मुसलमानों के बीच ख़र्च सहन करेंगे।

8. इस समझौते के तमाम शरीक लोगों पर मदीने में हंगामा करना और क़त्ल का ख़ून हराम होगा।

9. इस समझौते के फ़रीक़ों में कोई नई बात या झगड़ा पैदा हो जाए, जिसमें फ़साद का डर हो, तो इसका फ़ैसला अल्लाह और मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़रमाएंगे।

10. क़ुरैश और उसके मददगारों को पनाह नहीं दी जाएगी।

11. जो कोई यसरिब पर धावा बोल दे, उससे लड़ने के लिए सब आपस में सहयोग करेंगे और हर फ़रीक़ अपने-अपने लोगों की रक्षा करेगा।

12. यह समझौता किसी ज़ालिम या मुजरिम के लिए आड़ न बनेगा।[1]

इस समझौते के हो जाने से मदीना और उसके पास-पड़ोस में एक संघीय सरकार बन गई, जिसकी राजधानी मदीना थी और जिसके प्रमुख अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम थे और जिसमें लागू कलिमा और ग़ालिब हुक्मरानी मुसलमानों की थी और इस तरह मदीना सच में इस्लाम की राजधानी बन गया।

सुख-शान्ति के क्षेत्र को और ज़्यादा फैलाव देने के लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आगे दूसरे क़बीलों से भी हालात के मुताबिक़ इसी तरह के समझौते किए, जिसमें से कुछ का उल्लेख आगे किया जाएगा।

---

1. देखिए इब्ने हिशाम 1/503-504

सशस्त्र संघर्ष

हिजरत के बाद मुसलमानों के ख़िलाफ़ क़ुरैश की चालें और अब्दुल्लाह बिन उबई से पत्र-व्यवहार

पिछले पृष्ठों में बताया जा चुका है कि मक्का के काफ़िरों ने मुसलमानों पर कैसे-कैसे ज़ुल्म व सितम के पहाड़ तोड़े थे और जब मुसलमानों ने हिजरत शुरू की तो उनके ख़िलाफ़ कैसी-कैसी कार्रवाइयां की थीं, जिनकी बुनियाद पर वे हक़दार हो चुके थे कि उनके माल ज़ब्त कर लिए जाएं और उन पर हल्ला बोल दिया जाए। पर अब भी उनकी मूर्खताओं का सिलसिला बन्द न हुआ और वे अपनी चालों के चलने से रुके नहीं, बल्कि यह देखकर जोशे ग़ज़ब और भड़क उठा कि मुसलमान उनकी पकड़ से बच निकले हैं और उन्हें मदीने में एक शान्तिपूर्ण जगह मिल गई हैं। चुनांचे उन्होंने अब्दुल्लाह बिन उबई को, जो अभी तक खुल्लम खुल्ला मुश्रिक था, उसकी इस हैसियत की वजह से धमकी भरा एक पत्र लिखा कि वह अंसार का सरदार है, क्योंकि अंसार उसकी सरदारी पर सहमत हो चुके थे और अगर इसी बीच अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तशरीफ़ लाना न हुआ होता तो उसको अपना बादशाह भी बना लिए होते।

मुश्रिकों ने अपने इस पत्र में अब्दुल्लाह बिन उबई और उसके मुश्रिक साथियों को खिताब करते हुए दो टोक शब्दों में लिखा—

'आप लोगों ने हमारे साहब (आदमी) को पनाह दे रखी है, इसलिए हम अल्लाह की क़सम खाकर कहते हैं कि या तो आप लोग उससे लड़ाई कीजिए या उसे निकाल दीजिए या फिर हम अपने पूरे जत्थ के साथ आप लोगों पर धावा बोलकर आपके सारे लड़ने वालों को क़त्ल कर देंगे और आपकी औरतों की आबरू मिट्टी में मिला देंगे।'[1]

इस पत्र के पहुंचते ही अब्दुल्लाह बिन उबई मक्के के अपने उन मुश्रिक भाइयों के हुक्म के पूरा करने के लिए उठ खड़ा हुआ, इसलिए कि वह पहले ही से नबी सल्ल० के ख़िलाफ़ रंज और कीना लिए बैठा था, क्योंकि उसके मन में यह बात बैठी थी, कि आप ही ने उसकी बादशाही छीनी है।

चुनांचे अब्दुर्रहमान बिन औफ़ कहते हैं कि जब यह पत्र अब्दुल्लाह बिन उबई और उसके बुतपरस्त साथियों को मिला, तो वे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि

---

1. अबू दाऊद, बाब ख़बरुन्नज़ीर,

व सल्लम से लड़ने के लिए जमा हो गए। जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इसकी ख़बर हुई तो आप उनके पास तशरीफ़ ले गए। और फ़रमाया—

'क़ुरैश की धमकी तुम लोगों पर बहुत गहरा असर कर गई है। तुम ख़ुद अपने आपको जितना नुक़्सान पहुंचा देना चाहते हो, क़ुरैश इससे ज़्यादा नुक़्सान नहीं पहुंचा सकते थे। तुम अपने बेटों और भाइयों से ख़ुद ही लड़ना चाहते हो?'

नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की यह बात सुनकर लोग बिखर गए।[1]

उस वक़्त तो अब्दुल्लाह बिन उबई लड़ाई के इरादे से बाज़ आ गया, क्योंकि उसके साथी ढीले पड़ गए थे या उनकी समझ में बात आ गई थी, लेकिन मालूम होता है कि क़ुरैश के साथ उसके सम्बन्ध छिप-छिपकर क़ायम रहे, क्योंकि मुसलमानों और मुश्रिकों के बीच शरारतों और फ़सादों का कोई मौक़ा वह हाथ से जाने न देना चाहता था। फिर उसने अपने साथ यहूदियों को भी गांठ रखा था, ताकि इस मामले में उनसे भी मदद हासिल करे, लेकिन वह तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हिक्मत थी जो रह-रहकर शरारत और बिगाड़ की भड़कने वाली आग को बुझा दिया करती थी।[2]

मुसलमानों पर मस्जिदे हराम का दरवाज़ा बन्द किए जाने का एलान

इसके बाद हज़रत साद बिन मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु उमरा के लिए मक्का गए और उमैया बिन ख़ल्फ़ के मेहमान हुए। उन्होंने उमैया से कहा—

'मेरे लिए कोई तंहाई का वक़्त रखो, ज़रा मैं बैतुल्लाह का तवाफ़ कर लूं।'

उमैया दोपहर के क़रीब उन्हें लेकर निकला, तो अबू जह्ल से मुलाक़ात हो गई। उसने (उमैया को ख़िताब करके) कहा—

अबू सफ़वान! तुम्हारे साथ यह कौन है?'

उमैया ने कहा, यह साद हैं।

अबू जह्ल ने साद को ख़िताब करके कहा, अच्छा, मैं देख रहा हूं कि तुम बड़े अम्न और इत्मीनान से तवाफ़ कर रहे हो, हालांकि तुम लोगों ने बे-दीनों को पनाह दे रखी है और यह ख़्याल रखते हो कि उनकी मदद भी करोगे। सुनो, ख़ुदा की क़सम! अगर तुम अबू सफ़वान के साथ न होते, तो अपने घर सलामत पलटकर न जा सकते थे।

---

1. अबू दाऊद, वही बाब
2. इस मामले में देखिए सहीह बुख़ारी 2/655, 656, 916, 924

इस पर हज़रत साद रज़ि० ने ऊंची आवाज़ से कहा, सुन, ख़ुदा की क़सम ! अगर तूने मुझको इससे रोका, तो मैं तुझे ऐसी चीज़ से रोक दूंगा, जो तुझ पर इससे भी ज़्यादा भारी होगी यानी मदीना वालों के पास से गुज़रने वाला तेरा (कारोबारी) रास्ता ।[1]

मुहाजिरों को क़ुरैश की धमकी

ऐसा लगता है कि क़ुरैश इससे अधिक दुष्टताई और झगड़े का इरादा किए बैठे थे और ख़ुद मुसलमानों, मुख्य रूप से नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की समाप्ति का उपाय सोच रहे थे और यह सिर्फ़ सोच और विचार न था, बल्कि अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को इतने ताकीदी तरीक़े पर क़ुरैश की चालों और बुरे इरादों की जानकारी हो चुकी थी कि आप या तो जागकर रात गुज़ारते थे या सहाबा किराम के पहरे में सोते थे।

चुनांचे सहीह बुख़ारी व मुस्लिम में हज़रत आइशा रज़ि० से रिवायत किया गया है कि मदीना आने के बाद एक रात रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जाग रहे थे कि फ़रमाया, काश ! आज रात मेरे सहाबा में से कोई भला आदमी मेरे यहां पहरा देता। अभी हम इसी हालत में थे कि हमें हथियार की झंकार सुनाई पड़ी।

आपने फ़रमाया, कौन है ?

जवाब आया, साद बिन अबी वक़्क़ास।

फ़रमाया, कैसे आना हुआ ?

बोले, मेरे दिल में आपके बारे में ख़तरे का अंदेशा हुआ, तो मैं आपके यहां पहरा देने आ गया।

इस पर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन्हें दुआ दी, फिर सो गए।[2]

यह भी याद रहे कि पहरे की यह व्यवस्था कुछ रातों के लिए ख़ास न थी, बल्कि बराबर रहती थी। चुनांचे हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अन्हा से रिवायत है कि रात को अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के लिए पहरा दिया जाता था, यहां तक कि यह आयत उतरी—

---

1. बुख़ारी, किताबुल मग़ाज़ी, 2/563
2. सहीह बुख़ारी, बाबुल हिरासति फ़िल ग़ज़लि फ़ी सबी लिल्लाहि 1/404 मुस्लिम बाब फ़ज़्लु साद बन अबी वक़्क़ास 2/180

'अल्लाह आपको लोगों से सुरक्षित रखेगा।'

तब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कुब्बे से सर निकाला और फ़रमाया—

'लोगो ! वापस जाओ, अल्लाह ने मुझे सुरक्षित कर दिया है।[1]

फिर यह ख़तरा सिर्फ़ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़ात तक सीमित न था, बल्कि सारे ही मुसलमानों को था।

चुनांचे हज़रत उबई बिन काब रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि जब अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और आपके साथी मदीना तशरीफ़ ले गए और अंसार ने उन्हें अपने यहां पनाह दी, तो सारे अरब ने उन्हें एक कमान से मारा। चुनांचे ये लोग न हथियार के बग़ैर रात गुज़ारते थे और न हथियार के बग़ैर सुबह करते थे।

लड़ाई की इजाज़त

ऐसे ख़तरों से भरे हालात में जो मदीना में मुसलमानों के वजूद के लिए चुनौती बने हुए थे और जिनसे साफ़ था कि क़ुरैश किसी तरह होश के नाख़ून लेने और अपनी सरकशी से बाज़ आने के लिए तैयार नहीं, अल्लाह ने मुसलमानों को लड़ाई की इजाज़त दे दी, लेकिन इसे फ़र्ज़ नहीं क़रार दिया। इस मौक़े पर अल्लाह का जो इर्शाद आया, वह यह था—

'जिन लोगों से लड़ाई लड़ी जा रही है, उन्हें भी लड़ाई की इजाज़त दी गई, क्योंकि वे मज़्लूम हैं और यक़ीनन अल्लाह उनकी मदद की क़ुदरत रखता है।'

फिर इस आयत के साथ कुछ और आयतें भी उतरीं, जिनमें बताया गया कि यह इजाज़त सिर्फ़ लड़ाई बराए लड़ाई नहीं है, बल्कि इससे मक़्सूद बातिल (असत्य) का अन्त और अल्लाह की पहचान का क़ायम करना है, चुनांचे आगे चलकर इर्शाद हुआ—

'जिन्हें हम अगर ज़मीन में सत्ता दे दें, तो वे नमाज़ क़ायम करेंगे, ज़कात अदा करेंगे, भलाई का हुक्म देंगे और बुराई से रोकेंगे।' (22 : 41)

लड़ाई की यह इजाज़त पहले पहल क़ुरैश तक सीमित थी। फिर हालात बदलने के साथ इसमें भी तब्दीली आई। चुनांचे आगे चलकर यह इजाज़त अनिवार्यता में बदल गई और क़ुरैश से आगे बढ़कर ग़ैर-क़ुरैश को भी शामिल हो गई। उचित होगा कि घटनाओं के उल्लेख से पहले इसके अलग-अलग

---

1. जामेअ तिर्मिज़ी, अबवाबुत्तफ़्सीर 2/130

मरहलों को संक्षेप में प्रस्तुत कर दिया जाए।

(1) पहला मरहला : क़ुरैश को युद्ध का आरंभ करने वाला समझा गया, क्योंकि उन्होंने ज़ुल्म की शुरुआत की थी, इसलिए मुसलमानों का हक़ पहुंचता था कि उनसे लड़ें और उनके माल ज़ब्त कर लें, लेकिन अरब के दूसरे मुश्रिकों के साथ यह बात सही न थी।

(2) दूसरा मरहला : ग़ैर-क़ुरैश में से हर वह फ़रीक़ जिसने क़ुरैश का साथ दिया और उससे हाथ मिलाया या जिसने स्वत: मुसलमानों पर ज़ुल्म किया, उनसे लड़ना।

(3) तीसरा मरहला : जिन यहूदियों के साथ अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का अह्द व पैमान था, मगर उन्होंने ख़ियानत की और मुश्रिकों का साथ दिया, ऐसे यहूदियों के अह्द व पैमान को उनके मुंह पर दे मार दिया जाए और उनसे लड़ाई लड़ी जाए।

(4) चौथा मरहला : अह्ले किताब, जैसे ईसाइयों में से, जिन्होंने मुसलमानों के साथ दुश्मनी की शुरुआत की और मुक़ाबले में आ गए, उनसे लड़ा जाए, यहां तक कि वे छोटे बनकर अपने हाथों जिज़या अदा करें।

(5) पांचवां मरहला : जो इस्लाम में दाख़िल हो जाए उससे हाथ रोक लेना, भले ही वह मुश्रिक रहा हो, या यहूदी या ईसाई या कुछ और। अब उसके जान या माल से इस्लाम के हक़ के मुताबिक़ ही छेड़ की जा सकती है और उसका हिसाब अल्लाह पर है।

लड़ाई की इजाज़त मिली तो अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह तदबीर मुनासिब समझी कि अपने ग़लबे का दायरा क़ुरैश के उस कारोबारी राजमार्ग तक फैला दें जो मक्का से शाम तक आती जाती है। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ग़लबे के इस फैलाव के लिए दो योजनाएं बनाईं—

1. एक, जो क़बीले इस राजमार्ग के चारों ओर या इस राजमार्ग से मदीना तक के बीच के इलाक़े में आबाद थे, उनके साथ दोस्ती और सहयोग और लड़ाई न करने का समझौता। चुनांचे इसी तरह का एक समझौता आपने जुहैना के साथ किया। उनकी आबादी मदीने से तीन मरहले पर, यानी 45-50 मील की दूरी पर, वाक़े थी। इसके अलावा मुहिम के दौरान भी आपने कई समझौते किए, जिनका उल्लेख आगे किया जाएगा।

2. दूसरी योजना यह थी कि उस रास्ते पर लगातार फ़ौजी मुहिमें रवाना की जाएं।

सरीया और ग़ज़वे[1] (झड़पें और लड़ाइयां)

लड़ाई की इजाज़त मिल जाने के बाद इन दोनों योजनाओं को लागू करने के लिए मुसलमानों की फ़ौजी मुहिमों का सिलसिला अमली तौर पर शुरू हुआ। जांच-पड़ताल के लिए फ़ौजी दस्ते गश्त करने लगे। इसका मक़्सूद वही था जिसकी ओर इशारा किया जा चुका है—

- मदीने के पास-पड़ोस के रास्तों पर आमतौर से और मक्का के रास्ते पर ख़ास तौर से नज़र रखी जाए और उसके हालात का पता लगाया जाता रहे
- इन रास्तों पर वाक़े क़बीलों से समझौते किए जाएं
- यसरिब के मुश्रिकों, यहूदियों और आस-पास के बद्दुओं को यह एहसास दिलाया जाए कि मुसलमान ताक़तवर हैं और अब उन्हें अपनी पुरानी कमज़ोरी से निजात मिल चुकी है,

क़ुरैश को उनके बेजा ग़ुस्से और बदले की भावना के ख़तरनाक नतीजे से डराया जाए, ताकि जिस मूर्खता की दलदल में अब तक धंसते चले जा रहे हैं, उससे निकल कर होश में आएं और अपनी अर्थव्यवस्था और आर्थिक साधनों को ख़तरे में देखकर समझौते की ओर झुक जाएं और मुसलमानों के घरों में घुसकर उन्हें ख़त्म करने का जो संकल्प लिया है और अल्लाह की राह में जो रुकावटें खड़ी कर रहे हैं और मक्के के कमज़ोर मुसलमानों पर जो ज़ुल्म व सितम ढा रहे हैं, इन सबसे बाज़ आ जाएं और मुसलमान अरब प्रायद्वीप में अल्लाह का पैग़ाम पहुंचाने के लिए आज़ाद हो जाएं।

इन झड़पों और लड़ाइयों के संक्षिप्त हालात नीचे दिए जा रहे हैं।

1. सरीया सीफ़ुल बह्र[2]—रमज़ान सन् 01 हि० मुताबिक़ मार्च सन् 623 ई०

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत हमज़ा बिन अब्दुल मुत्तलिब रज़ियल्लाहु अन्हु को इस सरीया (झड़प) का अमीर बनाया और तीस मुहाजिरों को उनकी कमान में देकर शाम से आने वाले एक क़ुरैशी क़ाफ़िले

---

1. सीरत की परिभाषा में ग़ज़वा (लड़ाई) उस फ़ौजी मुहिम को कहते हैं जिसमें नबी सल्ल० स्वतः तशरीफ़ ले गए हों, चाहे लड़ाई हुई हो या न हुई हो और सरीया (झड़पें) वह फ़ौजी मुहिम है जिसमें आप ख़ुद तशरीफ़ न ले गए हों।
2. यानी समुद्र-तट

का पता लगाने के लिए रवाना फ़रमाया। इस क़ाफ़िले में तीन सौ आदमी थे, जिनमें अबू जह्ल भी था।

मुसलमान ईस[1] के आस-पास समुद्र तट पर पहुंचे तो क़ाफ़िले का सामना हो गया और दोनों फ़रीक़ लड़ाई के लिए तैयार हो गए, लेकिन क़बीला जुहैना के सरदार मज्दी बिन अम्र ने, जो दोनों फ़रीक़ का मित्र था, दौड़-धूप करके लड़ाई न होने दी।

हज़रत हमज़ा रज़ि० का यह झंडा पहला झंडा था, जिसे अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपने मुबारक हाथों से बांधा था। इसका रंग सफ़ेद था और इसके झंडाबरदार हज़रत अबू मुरसद कनाज़ बिन हुसैन ग़नवी रज़ियल्लाहु अन्हु थे।

2. सरीया राबिग़–शव्वाल 01 हि०, अप्रैल सन् 623 ई०

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत उबैदा बिन हारिस बिन मुत्तलिब को मुहाजिरों के साथ सवारों की टुकड़ी देकर रवाना फ़रमाया। राबिग़ की घाटी में अबू सुफ़ियान का सामना हुआ। उसके साथ दो सौ आदमी थे। दोनों फ़रीक़ों ने एक-दूसरे पर तीर चलाए, लेकिन इससे आगे कोई लड़ाई न हुई।

इस झड़प में मक्की फ़ौज के दो आदमी मुसलमानों से आ मिले—

एक हज़रत मिक़्दाद बिन अम्र बहरानी, और

दूसरे उत्बा बिन ग़ज़वान अल माज़नी रज़ियल्लाहु अन्हुमा।

ये दोनों मुसलमान थे और कुफ़्फ़ार के साथ निकले ही इस मक़्सद से थे कि इस तरह मुसलमानों से जा मिलेंगे।

हज़रत अबू उबैदा का झंडा सफ़ेद था और झंडाबरदार हज़रत मिस्तह बिन असासा बिन मुत्तलिब बिन अब्दे मुनाफ़ थे।

3. सरीया ख़र्रार[2], ज़ीक़ादा सन् 01 हि०, मई 623 ई०

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस सरीया का अमीर साद बिन अबी वक़्क़ास रज़ि० को मुक़र्रर फ़रमाया और उन्हें बीस आदमियों की कमान देकर क़ुरैश के एक क़ाफ़िले का पता लगाने के लिए रवाना फ़रमाया और यह ताकीद फ़रमा दी कि ख़र्रार से आगे न बढ़ें।

---

1. लाल सागर के पड़ोस में यम्बुअ और मर्वः के बीच एक जगह है।
2. जोह्फ़ा के क़रीब एक जगह का नाम है।

ये लोग पैदल रवाना हुए। रात को सफ़र करते और दिन में छिपे रहते थे। पांचवें दिन सुबह ख़र्रार पहुंचे तो मालूम हुआ कि क़ाफ़िला एक दिन पहले जा चुका है।

इस सरीए का झंडा सफ़ेद था और झंडा बरदार हज़रत मिक़्दाद बिन अम्र रज़ियल्लाहु अन्हु थे।

4. ग़ज़वा अबवा या वद्दान[1], सफ़र 02 हि॰, अगस्त सन् 623 ई॰

इस मुहिम में सत्तर मुहाजिरों के साथ अल्लाह के रसूल स्वतः भी गए थे और मदीने में हज़रत साद बिन उबादा रज़ि॰ को अपना स्थानापन्न नियुक्त कर दिया था। मुहिम का मक़्सद क़ुरैश के एक क़ाफ़िले की राह रोकना था। आप वद्दान तक पहुंचे, लेकिन कोई मामला पेश न आया।

इसी लड़ाई में आपने बनू ज़मरा के उस वक़्त के सरदार अम्र बिन मख़्शी ज़मरी से मैत्रीपूर्ण समझौता किया, समझौता इस तरह था—

'यह बनू ज़मरा के लिए मुहम्मद रसूलुल्लाह का लेख है। ये लोग अपनी जान और माल के बारे में सुरक्षित रहेंगे और जो इन पर धावा करेगा, उसके ख़िलाफ़ उनकी मदद की जाएगी, अलावा इसके कि ये ख़ुद अल्लाह के दीन के ख़िलाफ़ लड़ाई लड़ें। (यह समझौता उस वक़्त तक के लिए है) जब तक समुद्र ऊन को तर करे। (यानी हमेशा के लिए है) और जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी मदद के लिए उन्हें आवाज़ देंगे, तो उन्हें आना होगा।'[2]

यह पहली फ़ौजी मुहिम थी, जिसमें अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम स्वतः शरीक हुए थे और पन्द्रह दिन मदीने से बाहर रहकर वापस आए। इस मुहिम के झंडे का रंग उजला था और हज़रत हमज़ा रज़ियल्लाहु अन्हु झंडाबरदार थे।

5. ग़ज़वा बुवात, रबीउल अव्वल सन् 02 हि॰, सितम्बर 623 ई॰

इस मुहिम में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दो सौ सहाबा को साथ लेकर रवाना हुए। मक़्सूद क़ुरैश का एक क़ाफ़िला था, जिसमें उमैया बिन

---

1. वद्दान मक्का और मदीना के बीच एक जगह का नाम है। यह राबिग़ से मदीना जाते हुए 29 मील की दूरी पर पड़ता है। अबवा वद्दान के क़रीब ही एक दूसरी जगह का नाम है।
2. अल-मवाहिबुल लदं निया 1/75 मय शरह ज़रक़ानी

ख़ल्फ़ सहित क़ुरैश के एक सौ आदमी और ढाई हज़ार ऊंट थे। आप रिज़्वा से क़रीबी जगह बुवात[1] तक तशरीफ़ ले गए, लेकिन कोई मामला पेश न आया।

इस लड़ाई के दौरान हज़रत साद बिन मुआज़ रज़ियल्लाहु अन्हु को मदीने का अमीर बनाया गया था। झंडा सफ़ेद था और झंडा बरदार हज़रत साद बिन अबी वक़्क़ास रज़ियल्लाहु अन्हु थे।

6. ग़ज़वा सफ़वान, रबीउल अव्वल 02 हि०, सितम्बर 623 ई०

इस ग़ज़वा की वजह यह थी कि कर्ज़ बिन जाबिर फ़हरी ने मुश्रिकों की एक छोटी-सी सेना के साथ मदीने की चरागाह पर छापा मारा और कुछ मवेशी लूट लिए। अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सत्तर सहाबा के साथ उसका पीछा किया और बद्र के पड़ोस में स्थित सफ़वान घाटी तक तशरीफ़ ले गए, लेकिन कर्ज़ और उसके साथियों को न पा सके और किसी टकराव के बिना वापस आ गए। इस ग़ज़वे को कुछ लोग 'पहली बद्र की लड़ाई' भी कहते हैं।

इस ग़ज़वे के दौरान मदीने का अमीर ज़ैद बिन हारिसा रज़ि० को बनाया गया था। झंडा सफ़ेद था और झंडा बरदार हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हु थे।

7. ग़ज़वा ज़ुल उशैरा, जुमादल ऊला व जुमादल आख़र 02 हि०, नवम्बर, दिसम्बर 623 ई०

इस मुहिम में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के साथ डेढ़ या दो सौ मुहाजिर थे, लेकिन आपने किसी को चलने पर मजबूर नहीं किया था। सवारी के लिए सिर्फ़ तीस ऊंट थे, इसलिए लोग बारी-बारी सवार होते थे। निशाने पर क़ुरैश का एक क़ाफ़िला था जो शाम देश जा रहा था और मालूम हुआ था कि यह मक्के से चल चुका है। इस क़ाफ़िले में क़ुरैश का ख़ासा माल था। आप उसकी तलाश में ज़ुल उशैरा[2] तक पहुंचे। लेकिन आपके पहुंचने से कई दिन पहले ही क़ाफ़िला जा चुका था।

यह वही क़ाफ़िला है जिसे शाम से वापसी पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने गिरफ़्तार करना चाहा, तो यह क़ाफ़िला तो बच निकला, लेकिन बद्र की लड़ाई हो गई।

---

1. बुवात और रिज़्वा कोहिस्तान जुहैना के सिलसिले के दो पहाड़ हैं जो सच तो यह है कि एक ही पहाड़ की दो शाखाएं हैं। यह मक्का से शाम जाने वाले राजमार्ग से मिला हुआ है और मदीना से 48 मील की दूरी पर है।
2. इसे उसैरा भी कहते हैं। यम्बूअ के पड़ोस में एक जगह है।

इस मुहिम पर इब्ने इस्हाक़ के अनुसार अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जुमादल ऊला के अन्त में रवाना हुए और जुमादल उखरा में वापस आए। शायद यही वजह है कि इस ग़ज़वे के महीने के तै करने में सीरत लिखने वालों में मतभेद हो गया है।

इस ग़ज़वे में अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बनू मुदलिज और उनके मित्र बनू ज़मरा से लड़ाई न करने का समझौता किया।

सफ़र के दिनों में मदीने के नेतृत्व का काम हज़रत अबू सलमा बिन असद मख़्ज़ूमी रज़ि० ने अंजाम दिया। इस बार भी झंडा सफ़ेद था और झंडा बरदारी हज़रत हमज़ा फ़रमा रहे थे।

8. सरीया नख़्ला, रजब 02 हि०, जनवरी 624 ई०

इस मुहिम पर अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन जहश रज़ियल्लाहु अन्हु के नेतृत्व में बारह मुहाजिरों की एक टुकड़ी रवाना फ़रमाई। हर दो आदमी के लिए एक ऊंट था, जिस पर बारी-बारी दोनों सवार होते थे।

टुकड़ी के अमीर को अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक लेख लिख दिया था और हिदायत फ़रमाई थी कि दो दिन सफ़र कर लेने के बाद ही इसे देखेंगे। चुनांचे दो दिन के बाद हज़रत अब्दुल्लाह ने लेख देखा, तो उसमें यह लिखा था—

'जब तुम मेरा यह लेख देखो तो आगे बढ़ते जाओ, यहां तक कि मक्का और ताइफ़ के बीच नख़्ला में उतरो और वहां क़ुरैश के एक क़ाफ़िले की घात में लग जाओ और हमारे लिए उसकी ख़बरों का पता लगाओ।'

उन्होंने सुना और बात मान ली और अपने साथियों को इसकी ख़बर देते हुए फ़रमाया कि मैं किसी पर ज़बरदस्ती नहीं करता, जिसे शहादत से मुहब्बत हो वह उठ खड़ा हो और जिसे मौत नागवार हो, वह वापस चला जाए, बाक़ी रहा मैं तो मैं बहरहाल आगे जाऊंगा।

इस पर सारे ही साथी उठ खड़े हुए और अभीष्ट मंज़िल के लिए चल पड़े। अलबत्ता रास्ते में साद बिन अबी वक़्क़ास और उत्बा बिन ग़ज़वान रज़ियल्लाहु अन्हुमा का ऊंट ग़ायब हो गया, जिस पर ये दोनों बुज़ुर्ग बारी-बारी सफ़र कर रहे थे। इसलिए दोनों पीछे रह गए।

हज़रत अब्दुल्लाह बिन जहश रज़ि० लम्बा फ़ासला तै करके नख़्ला पहुंच गए, वहां से क़ुरैश का एक क़ाफ़िला गुज़रा, किशमिश, चमड़े और व्यापार का सामान

लिए हुए था। क़ाफ़िले में अब्दुल्लाह बिन मुग़ीरा के दो बेटे उस्मान और नौफ़ुल और अम्र बिन हज़रमी और हकीम बिन कीसान (मुग़ीरा के दास) थे।

मुसलमानों ने आपस में मश्विरा किया कि आख़िर क्या करें। आज हराम महीना रजब का आख़िरी दिन है। अगर हम लड़ाई करते हैं, तो इस हराम महीने का अनादर होता है, और रात भर रुक जाते हैं, तो ये लोग हरम की हदों में दाख़िल हो जाएंगे। इसके बाद सबकी यही राय हुई कि हमला कर देना चाहिए।

चुनांचे एक व्यक्ति ने अम्र बिन हज़रमी को तीर मारा और उसका काम ख़त्म कर दिया। बाक़ी लोगों ने उस्मान और हकीम को गिरफ़्तार कर लिया। अलबत्ता नौफ़ुल भाग निकला। इसके बाद ये लोग दोनों क़ैदियों और क़ाफ़िले के सामान को लिए हुए मदीना पहुंचे। उन्होंने ग़नीमत के माल से ख़ुम्स (पांचवां हिस्सा) भी निकाल लिया था।[1] और यह इस्लामी तारीख़ का पहला ख़ुम्स, पहला मक़्तूल और पहले क़ैदी थे।

अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनकी इस हरकत को पसन्द नहीं किया और फ़रमाया कि मैंने तुम्हें हराम महीने में लड़ने का हुक्म नहीं दिया था और क़ाफ़िले के सामान और क़ैदियों के सिलसिले में किसी भी तरह के प्रयोग से हाथ रोक लिया।

इधर इस घटना से मुश्रिकों को इस प्रचार का मौक़ा मिल गया कि मुसलमानों ने अल्लाह के हराम किए हुए महीने को हलाल कर लिया। चुनांचे बड़ी कहा-सुनी हुई, यहां तक कि अल्लाह ने वह्य के ज़रिए इस प्रचार की क़लई खोल दी और बतलाया कि मुश्रिक जो कुछ कर रहे हैं, वह मुसलमानों की हरकत से कहीं ज़्यादा बड़ा जुर्म है। इर्शाद हुआ—

'लोग तुमसे हराम महीने में लड़ाई के बारे में पूछते हैं। कह दो, इसमें लड़ना बड़ा गुनाह है और अल्लाह की राह में रोकना और अल्लाह के साथ कुफ़्र करना, मस्जिदे हराम से रोकना और उसके रहने वालों को वहां से निकालना, यह सब अल्लाह के नज़दीक और ज़्यादा बड़ा जुर्म है और फ़िला क़त्ल से बढ़कर है।'

(2 : 217)

इस वह्य ने स्पष्ट कर दिया कि मुसलमान योद्धाओं के बारे में मुश्रिकों ने जो

---

1. सीरत लिखने वालों का बयान यही है, मगर इसमें पेचीदगी यह है कि ख़ुम्स निकालने का हुक्म बद्र की लड़ाई के मौक़े पर उतरा था और इसके उतरने की वजह का जो विवरण तफ़्सीर की किताबों में बयान किया गया है, उनसे मालूम होता है कि इससे पहले तक मुसलमान ख़ुम्स के हुक्म को नहीं जानते थे।

शोर मचा रखा है, उसकी कोई गुंजाइश नहीं, क्योंकि क़ुरैश इस्लाम के ख़िलाफ़ लड़ाई में और मुसलमानों पर ज़ुल्म व सितम करने में सारी ही हुर्मतें कुचल चुके हैं। क्या जब हिजरत करने वाले मुसलमानों का माल छीना गया और पैग़म्बर को क़त्ल करने का फ़ैसला किया गया तो यह घटना शहरे हराम (मक्का) से बाहर कहीं और की थी? फिर क्या वजह है कि इन हुर्मतों की पाकी यकायक पलट आई और उनका चाक करना अफ़सोस और शर्म की वजह बन गया। यक़ीनी तौर पर मुश्रिकों ने प्रोपगंडे का जो तूफ़ान मचा रखा है, वह खुली हुई बेहयाई और बेशर्मी पर आधारित है।

इसके बाद अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने दोनों क़ैदियों को आज़ाद कर दिया और मक़्तूल के औलिया को उसका ख़ून बहा अदा किया।[1]

ये हैं बद्र की लड़ाई से पहले के सरीए और ग़ज़वे। इनमें से किसी में भी लूटमार और क़त्ल व ग़ारतगरी की नौबत नहीं आई, जब तक कि मुश्रिकों ने कर्ज़ बिन जाबिर फ़हरी के नेतृत्व में ऐसा नहीं किया, इसलिए इसकी शुरूआत भी मुश्रिकों ही की ओर से हुई, जबकि इससे पहले भी वे तरह-तरह के ज़ुल्म व सितम के पहाड़ तोड़ते रहते थे।

इधर सरीया अब्दुल्लाह बिन जहश की घटनाओं के बाद मुश्रिकों का डर हक़ीक़त बन गया और उनके सामने एक ख़तरा साक्षात सामने आ खड़ा हुआ। उन्हें जिस फंदे में फंसने का डर था, उसमें अब वे वाक़ई फंस चुके थे। उन्हें मालूम हो गया कि मदीना का नेतृत्व पूरी तरह जाग रहा है और उनकी एक-एक व्यापारिक गतिविधियों पर नज़र रखता है। मुसलमान चाहें तो तीन सौ मील का रास्ता तै करके उनके इलाक़े के अन्दर उन्हें मार-काट सकते हैं, क़ैद कर सकते हैं, माल लूट सकते हैं और इन सबके बाद सही-सालिम वापस भी जा सकते हैं।

मुश्रिकों की समझ में आ गया कि उनकी शामी तिजारत अब स्थाई रूप से ख़तरे के निशाने पर है, लेकिन इन सबके बावजूद वे अपनी मूर्खता से माने नहीं और जुहैना और बनू ज़मरा की तरह सुलह-सफ़ाई की राह अपनाने के बजाए

---

1. इन सरीयों और ग़ज़वों का सविस्तार विवेचन नीचे की किताबों से लिया गया है। ज़ादुल मआद 2/83-85, इब्ने हिशाम 1/591-605, रहमतुल लिल आलीमन 1/115-116, 2/215, 216, 468-470, इन पुस्तकों में इन सरीयों और ग़ज़वों की तर्तीब और उनमें शिरकत करने वालों की तायदाद के बारे में मतभेद है। हमने अल्लामा इब्ने क़य्यिम और अल्लामा मंसूरपुरी पर भरोसा किया है।

अपने ग़ुस्से की तेज़ी और दुश्मनी की भावना में कुछ और आगे बढ़ गए और उनके बड़ों ने अपनी इस धमकी को अमली जामा पहनाने का फ़ैसला कर लिया कि मुसलमानों के घरों में घुसकर उनका सफ़ाया कर दिया जाएगा। चुनांचे यही ग़ुस्सा था जो उन्हें बद्र के मैदान तक ले आया।

बाक़ी रहे मुसलमान, तो अल्लाह ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन जहश के सरीया के बाद शाबान 02 हि० में उन पर लड़ाई फ़र्ज़ क़रार दे दी और इस सिलसिले में कई स्पष्ट आयतें उतरीं। इर्शाद हुआ—

'अल्लाह के रास्ते में उनसे लड़ो, जो तुमसे लड़ते हैं और हद से आगे न बढ़ो। यक़ीनन अल्लाह हद से आगे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करता और उन्हें जहां पाओ, क़त्ल करो और जहां से उन्होंने तुम्हें निकाला है, वहां से तुम भी उन्हें निकाल दो और फ़िला क़त्ल से ज़्यादा सख़्त है और उनसे मस्जिदे हराम के पास लड़ो नहीं, यहां तक कि वे तुमसे मस्जिदे हराम में लड़ें। पस अगर वे (वहां) लड़ें, तो तुम (वहां भी) उन्हें क़त्ल करो। काफ़िरों का बदला ऐसा ही है। पस अगर वे रुक जाएं तो बेशक अल्लाह माफ़ फ़रमाने वाला और रहम फ़रमाने वाला है और उनसे लड़ाई करो, यहां तक कि फ़िला न रहे और दीन अल्लाह के लिए हो जाए। पस अगर वे रुक जाएं, तो ज़्यादती नहीं है, मगर ज़ालिमों ही पर।'

(2 : 190-193)

इसके बाद जल्द ही दूसरी क़िस्म की आयतें उतरीं, जिनमें लड़ाई का तरीक़ा बताया गया है और उस पर उभारा गया है और कुछ आदेश भी दिए गए हैं। चुनांचे इर्शाद है—

'पस जब तुम लोग कुफ़्र करने वालों से टकराओ, तो गरदनें मारो, यहां तक कि जब उन्हें अच्छी तरह कुचल लो, तो जकड़ कर बांधो। इसके बाद या तो एहसान करो या फ़िदया लो, यहां तक कि लड़ाई अपने हथियार रख दे। यह है (तुम्हारा काम) और अगर अल्लाह चाहता, तो ख़ुद ही उनसे बदला ले लेता, लेकिन (वह चाहता है कि) तुममें से कुछ को कुछ के ज़रिए आज़माए और जो लोग अल्लाह की राह में क़त्ल किए जाएं, अल्लाह उनके अमल को हरगिज़ बर्बाद न करेगा। अल्लाह उनकी रहनुमाई करेगा और उनका हाल दुरुस्त करेगा और उनको जन्नत में दाख़िल करेगा, जिससे उनको भिज्ञ करा चुका है। ऐ ईमान वालो! अगर तुमने अल्लाह की मदद की, तो अल्लाह तुम्हारी मदद करेगा और तुम्हारे क़दम जमाए रखेगा।' (47 : 4-7)

इसके बाद अल्लाह ने उन लोगों की निन्दा की, जिनके दिल लड़ाई का हुक्म सुनकर कांपने और धड़कने लगे थे। फ़रमाया—

'तो जब कोई यक़ीनी सूरः नाज़िल की जाती है और उसमें लड़ाई का हुक्म होता है, तो तुम देखते हो कि जिन लोगों के दिलों में बीमारी है, वे तुम्हारी ओर इस तरह देखते हैं जैसे वह आदमी देखता है, जिस पर मौत की ग़शी छा रही हो।'

(47 : 20)

सच तो यह है कि लड़ाई का फ़र्ज़ होना और उस पर उभारना और उस पर तैयारी का हुक्म देना हालात के तक़ाज़े के ठीक अनुरूप था, यहां तक कि अगर हालात पर गहरी नज़र रखने वाला कोई कमांडर होता तो वह भी अपनी फ़ौज को हर तरह के हंगामी हालात का तत्काल मुक़ाबला करने के लिए तैयार रहने का हुक्म देता, इसलिए वह परवरदिगारे बरतर क्यों न ऐसा हुक्म देता जो हर खुली और ढकी बात को जानता है।

सच तो यह है कि हालात सत्य-असत्य (हक़ व बातिल) के दर्मियान एक ख़ूनी और फ़ैसला कर देने वाली लड़ाई का तक़ाज़ा कर रहे थे, ख़ास तौर से सरीया अब्दुल्लाह बिन जह्श के बाद, जो कि मुश्रिकों की ग़ैरत और स्वाभिमान पर एक ज़ोरदार चोट थी, और जिसने उन्हें सीख़ का कबाब बना रखा था।

लड़ाई के हुक्मों वाली आयतों के देखने से अन्दाज़ा होता है कि ख़ूनी लड़ाई का वक़्त क़रीब ही है और इसमें जीत मुसलमानों ही को मिलेगी।

आप इस बात पर नज़र डालिए कि अल्लाह ने किस तरह मुसलमानों को हुक्म दिया है कि जहां से मुश्रिकों ने तुम्हें निकाला है, अब तुम भी वहां से उन्हें निकाल दो। फिर किस तरह उसने क़ैदियों के बांधने और विरोधियों को कुचल कर लड़ाई के सिलसिले को अन्त तक पहुंचाने की हिदायत दी है, जो एक ग़ालिब और विजयी सेना से ताल्लुक़ रखती है। यह इशारा था कि आख़िरी ग़लबा मुसलमानों ही को नसीब होगा लेकिन यह बात परदों और इशारों में बताई गई, ताकि जो व्यक्ति अल्लाह के रास्ते में जिहाद के लिए जितनी गर्मजोशी रखता है, उसे व्यवहार में प्रदर्शित कर सके।

फिर इन्हीं दिनों, (शाबान सन् 02 हि०, फ़रवरी 624 ई० में) अल्लाह ने हुक्म दिया कि क़िब्ला बैतुल मक़्दिस के बजाए ख़ाना काबा को बनाया जाए और नमाज़ में उसी ओर रुख़ किया जाए।

इसका फ़ायदा यह हुआ कि कमज़ोर और मुनाफ़िक़ यहूदी जो मुसलमानों की पंक्ति में केवल बेचैनी और बिखराव फैलाने के लिए दाख़िल हो गए थे, खुलकर सामने आ गए और मुसलमानों से अलग होकर अपनी असल हालत पर वापस चले गए और इस तरह मुसलमानों की पंक्तियां बहुत से ग़द्दारों और ग़लत क़िस्म के लोगों से पाक हो गईं।

क़िब्ला बदलने में इस ओर भी इशारा था कि अब एक नया दौर शुरू हो रहा है, जो इस क़िब्ले पर मुसलमानों के क़ब्ज़े से पहले ख़त्म न होगा? क्योंकि यह बड़ी अजीब बात होगी कि किसी क़ौम का क़िब्ला उसके दुश्मनों के क़ब्ज़े में हो और अगर है तो फिर ज़रूरी है कि किसी न किसी दिन उसे आज़ाद कराया जाए।

इन हुक्मों और इशारों के बाद मुसलमानों का उत्साह और बढ़ गया और अल्लाह के रास्ते में उनकी जिहादी भावना और दुश्मन से फ़ैसला कर देने वाली टक्कर लेने की आरज़ू कुछ और बढ़ गई।